PARAMSANT SADGURU DR. KARTAR SINGH JI MAHARAJ

प्रवचन द्द गाजियाबाद भंडाराए 16 अक्टूबरए 1999 ;सायंकालद्ध

आप दूर.दूर से पधारे हैं । आजकल महंगाई के दिन हैं । खर्चा भी काफी होता है । इसलिए हमें गंभीरता से मनन करना हैए कि हम कौन सा ध्येय लेकर इस सत्संग में सम्मिलित हुए हैं । विश्व का प्रत्येक व्यक्तिए शांति चाहता हैए सुख चाहता हैए आनन्द चाहता है । परन्तु वह दुख नहीं चाहता तो ऐसी स्थिति कैसे प्राप्त हो इस विषय पर विस्तार से बोलने के लिए काफी समय चाहिए । मैं संक्षिप्त में आपकी सेवा में निवेदन करूंगा । कुछ लोगों ने पूछा कि क्या कारण है कि लोग गंगा स्नान करते हैंए वो पवित्र हो जाते हैंए बाहर से भी और भीतर से भीए तो गंगा माई क्या उत्तर देती हैए उनकी दीनता देखिएए सरलता देखिएए वो उत्तर देती हैं कि मैं कुछ नहीं करतीए महापुरूष आते हैं वो स्नान करते हैंए उनके शरीर से जल छूता है और वो जल पवित्र हो जाता है । जिज्ञासू लोग आते हैं वो उस पानी में उस जल में स्नान करते हैं तो वो भी पवित्र हो जाते हैं । ये संत समागम जो है यह भी एक गंगा पर स्नान करने का महत्व रखता है । चाहे हरिद्वार में जाऐंए चाहे गढ़मुक्तेश्वर जाऐंए चाहे वाराणसी जाऐंए वही गंगा माँ है । देश में उसी की पूजा होती हैए काहे के लिए ६ कि वो अति निर्मल हैए और जो भी व्यक्ति क्ति उसके संपर्क में आता है उसमें डुबकी लगाता है ए भीतर और बाहर वह व्यक्ति निर्मल हो जाता है । कैसी निर्मलता ६ हम जितने लोग हैं बाहर से भले ही जितने सुन्द र वस्त्र पहने होंए अच्छे लगते होंए परन्तु भीतर में हमए नीचों से भी नीच हैं । महापुरूष हिचकिचाते नहीं हैंए जब वो कहते हैं ।

श्श्कह नानक मैं ना कोऊए राख लेओ सरनाई ।श्श

हे प्रभु मेरे में कोई गुण नहीं हैए जिसके आधार पर जो आप से भिक्षा मांगूए झोली फैलाऊँ । केवल एक ही प्रार्थना कर सकता हूं कि हे सच्चे पिता कि आप मेरे दोष मत देखोए अप चरणों में जगह दे दो ।

हमारे देश की जो संस्कृति हैए वो स्त्रियों पर आधारित हैए विवाह पर तथा उसके पश्चात वो पति के सम्मुख अपने आप को तनए मनए धन से समर्पित कर देती है । मेरा मुझ में कुछ नहींए जो कुछ है सो तेराए तेरा तुझको सौंपते क्या लागे है मेरा । ये दार्शनिक बात भले सब लोगों को अच्छी लगती होए परन्तु व्यवहार में केवल हमारे देश की स्त्रियाँ ही कर पाती हैं । ठीक हैए आज के समय में परिवर्तन आ रहा है । परन्तु वो बात जो आज से 50 साल पहलेए या कुछ और पहलेए बहनों से हमें जो प्रेरणा मिलती थीए वो नहीं हैए तब भी उनमें वो गुण अभी भी प्रकाशित हो रहे हैं । वो अपना शरीरए अपना मनए अपना तनए धनए सब कुछ पति के चरणों में समर्पित कर देती है ।

पार्वती जी ने कितनी तपस्या की भगवान शिव को प्राप्त करने के लिए । मायके हैंए उच्च कोटि के पिता राजा हैं । राज दरबार के सब सुख छोड़ दिये । जंगलों में जाकर तपस्या कर रही हैं । काहे के लिएए अपना शरीरए अपना मनए और जो भी कुछ अपना है सब भगवान शिव को अर्पण कर देना है और भीतर से बिल्कुल शून्य हो जाना हैए कुछ भी न हो । ऊँ तत् सत्ए कुछ नहीं सिवाय परम पिता परमात्मा के । भीतर में ऐसी शून्यता आ जाए कि सिवाए भगवान शिव के अलावा कुछ रहे ही नहीं ।

लक्ष्मी जी ने वरमाला डाल दी भगवान विष्णु के गले में । स्वंयवर समाप्त हुआए शादी हो गईए विवाह हो गया । लक्ष्मी जी चरणों में बैठ गई हैं और भगवान से प्रार्थना करती हैं कि मुझसे आप कभी मत पूछिएगा कि मुझे क्या चाहिए । ईश्वर को कह रही हैंए मुझे कुछ नहीं चाहिए । मुझे आज्ञा दीजिए कि मैं सदा आपके चरणों में बैठी रहूंए और चरण दबाती रहूं ।

ये व्यवहार या ये आचरण पुरूषों में बहुत कम हैए या है ही नहीं । तो कहने का भाव मेरा यह है कि सच्चे जिज्ञासु कोए अपने हृदय कोए संवेदनशील बनाना है । प्रभु की कृपा तो सब पर एक जैसी बरस रही हैए वृष्टि हो रही है ।

श्झिम.झिम बरसे अमृत धारा ।श्

उस आत्मा की धार जो है सब स्थानों परए सब व्यक्तियों परए वनस्पति परए पत्थर पर . वृष्टि हो रही हैए बारिश हो रही है । परन्तु उस वृष्टि को कौन ग्रहण कर पाएगा ६ जिसका हृदय कोमल होगाए जिसका हृदय संवेदनशील होगा । जिसका ह्रदयए इस अमृत आत्मा की जो धार हैए जो सब जगह एक जैसी बरस रही हैए उसे ग्रहण कर सके ।

इस संवेदनशीलता को बनाने का नाम ही साधना है । अन्यथा भीतर.बाहर एक परमात्मा है । भीतर भी वही हैए बाहर भी वही है । परन्तु हमें उसकी अनुभूति क्यों नहीं होती हैए इसलिये कि हम पत्थर समान हैं । बुरा मत मानियेगा हम पत्थर समान हैं । ईश्वर की इतनी कृपा है कि 24 घण्टें उसकी कृपा वृष्टि सब पर एक जैसी हो रही है । तब हम करें क्या । इसके लिए 2.4 बातें मुख्य जो हैंए वो निवेदन करता हूं । तो संवेदनशील बनने के लिए इस आत्मप्रसादी कोए गुरूप्रसादी को गृहण करने के लिएए हमें अपने हृदय को कोमल बनाना पड़ेगा । अपने पूरे शरीर को कोमल बनाना पड़ेगा । परमात्मा कहीं दूर नहीं हैए भीतर में भी हैए बाहर में भी है ।

श्अन्दर बाहर एको जानो ।
ये गुरूज्ञान बताईए कह नानकए
बिन आपा की मिटे ना भ्रम की खाई ।श्

वो भीतर में भी हैए बाहर में भी है । हमारे भीतर में भ्रम फैला हुआ है । परमात्मा पता नहीं हिमालय की चोटी पर हैए पता नहीं जंगलों में हैए ये सब भ्रम ही हैए ये भ्रम को दूर करना है और भ्रम कैसे दूर होगा ।

हम सब अहंकार के प्रतीक हैंए मैंए मेरा पनए मैं मेरा पनए इस मैं को खत्म करना है । मुसलमान भाईयों में एक ईद आती हैए जब वो बकरे का सिर काटते हैंए और प्रभु चरणों में अर्पण करते हैं । वास्तव में हमारे यहां नवरात्रों के दिनों में कलकत्ता मेंए और एक.दो स्थानों पर अब भी बलि दान दिया जाता हैए वो सांकेतिक है ।

वास्तविक बलि दान जो हैए वो अपने अहंकार का हैए मैं और मेरा पन । यह अहंकार अपने प्रीतम सेए परमपिता परमात्मा से दूर करता है । हम यह समझ रहे कि प्रभु लाखों करोड़ों मील दूर है । कोई हज करने जाता हैए कोई बद्रीनारायण जी जाता हैए और कई स्थानों पर यात्रा करने जाते हैए उसका भी लाभ है । परन्तु वास्तविक जो वस्तु है वो तो आपके भीतर और बाहर इसी वक्त आपके अन्दर है । एक क्षण भर में उससे तदरूपता हो सकती है । उस महान सागर में आप विलय हो सकते हैं । यदि हम अपने अहंकार की आहुति भगवान के चरणों में दे देंए बड़ा कठिन है । कहना बहुत सरल है परन्तु बहुत कठिन है । इस कठिनाई को दूर करने का जो उपायए हम करते हैंए उसी का नाम ही साधना हैए अभ्यास है । बड़े.बड़े अच्छे संतों कोए फकीरों को अहंकार नहीं छोड़ता ए आप और हम तो कोई चीज ही नहीं है । अहंकार किसी को नहीं छोड़ता और अहंकार का साम्राज्य बहुत फैला हुआ है । इसी शरीर में नहीं है केवल । सारे संसार में फैला हुआ है । उस अहंकार के कारण हम ऐसे कर्म करते हैं या पाप करते हैंए जो आगे ही हम कीचड़ में फसे हैं और आगे कीचड़ में धकेल देते है । इस माया रूपी कीचड़ से निकलने के लिए भगवान कृष्ण ने अर्जुन को उपदेश दियाए भले ही व्यास जी ने नाम रख दियाए महाभारत का युद्धए प्रतीक बना दिया ।

कौरवों और पाण्डवों में युद्ध पर महत्व दिया गयाए वास्तव में गांधी जी के शब्दों मेंए उन्होंने जो उपदेश दियाए भगवान कृष्ण ने जो उपदेश दिया अर्जुन कोए उसको महत्व दिया है और उस उपदेश को गीता के रूप में संकलित किया है । सब महापुरूषों ने । बाकी जो हैए लड़ाई.झगड़ा गांधी जी ने वो पोर्शन नहीं लिया है। उनको व्यास जी पर इतनी श्रद्धा नहीं थी केवल उसी पोर्शन परए उसी हिस्से पर जो गीता में संकलित किया गया हैए उसकी बहुत स्तुति की है । तो उस गीता में अर्जुन को प्रेरणा दी गई है । पहला जो अध्याय है वो भूमिका हैए दूसरे अध्याय से शुरू होता है वास्तविक उपदेश । संसार रूपी कीचड़ से कैसे निकला जाए । शुरू के श्लोक तो इतने महत्वपूर्ण नहीं हैंए परन्तु बाद के जो 35 या 36 श्लोक हैं अति महत्वपूर्ण हैं । और उन श्लोकों का संक्षिप्त में सार जो हैए वो यही है कि अहंकार को छोडें । अहंकार का कारण मैंने बताया है जैसे इच्छाओं और आशाओं की पूर्ति न हो तोए मन खराब हो जाता है फिर क्रोध आता है क्रोध से बुद्धि का नाश होता हैए बुद्धि के नाश से सब कुछ नाश हो जाता हैए ये सारा कुछ समझाया है । उसमें मुख्य बात यही बतायी है कि अहंकार जो है मनुष्य को माया रूपी कीचड़ से निकलने नहीं देता । इसी तरह आगे विस्तार करते गए हैंए अर्जुन को समझाते गए हैं कि संसार रूपी कीचड़ से किस प्रकार निकला जाए । यहां रहते हुए मनुष्य ने कर्म भी

करने हैं और भी बातें करनी हैं । गृहस्थ में जाना हैए वानप्रस्थ मे जाना हैए सन्यास में जाना हैए तो सब तरह के जीवन को लेकरए सब तरह के साधन भगवान ने अर्जुन को समझाये हैं । मुख्य रूप से जो अर्जुन को समझाया है कि मुझे वो भक्त प्रिय हैं जिनमें 12 वें अध्यायए श्लोक 13 वें से लेकर 20 वें तक जो गुण हैए यदि वो गुण जिज्ञासुओं में हैं तो वो प्रेमी मुझे अति प्रिय है । अंत में अर्जुन सुनता गयाए पता नहीं सारा कुछ सुन पाया या समझ पाया या नहीं । परन्तु प्रश्न भी करता गयाए मगर भगवान उत्तर भी देते गए वैसे । परन्तु अंत में वह मानसिक तौर पर थक गया । 18 वें अध्याय के अन्तिम दो श्लोकों में उसने भगवान के चरण को पकड़ लिये और हाथ जोड़ कर करबद्ध प्रार्थना कीए हे प्रभु आप जैसे कहेंगे मैं वैसा कर लूंगा उसने तर्क करना छोड़ दिया । मनुष्य का स्वभाव है कि वो तर्क करता रहता हैए यह मन शांत नहीं होता है और कई लोग तो यह कहते हैंए ये गीता का जो उपदेश भगवान ने दियाए ये भगवान आत्म.रूप में आकरए मन रूपी अर्जुन कोए भीतर में ही उपदेश दिया । केवल एक ही शख्स ने सुना और किसी ने नहीं सुना । वो भी व्यास जी की कला ही हैए जो जीवन की कला हैए लिखने की कला है । जो पुस्तकें लिखते हैंए ऐसी पुस्तकें लिखते हैंए वो रोचक बनाने के लिए कुछ न कुछ बैकग्राउंड बना लेते हैए भूमिका बना लेते हैं ।

खैरए तो जिज्ञासु को उस 12 वें अध्याय मेंए भगवान कहते हैं जिनमें निम्न गुण हैंए वो प्रेमी मुझे प्रिय हैए बाकी सब छोड़ दें । 12 वें अध्याय में 13 वें श्लोक से लेकर 20 वें श्लोक तक इतने गुण हैं कि एक.एक गुण को ले लें हम तो कोई भी शख्स ये नहीं कह सकता कि उसमें ये गुण पूर्णतरू हैं । तो परमात्मा मिलता हैए भक्ति सफल होती हैए बिन गुण भक्ति न होय । भक्ति न होने का अर्थ ये है कि भक्ति में सफलता नहीं मिलती जब तक उन गुणों को धारण नहीं करेंगे । भगवान कहते हैं जब तक ये गुण मेरे भक्त में नहीं होंगे वो जिज्ञासु मुझे प्रिय नहीं होगा । तो साधना को सफल करने के लिए सब भाई.बहन कहते हैं कि हमारा मन नहीं लगता । मन एकाग्र नहीं होता हैए और भी अपनी बुराइयां लिखते हैंए तो मेरी करबद्ध प्रार्थना है आपकी सेवा मेंए कि कुछ समय दो चार मिनट रोज साधना से पहले या साधना खत्म करने के बाद स्व.निरीक्षण करेंए कि क्या कारण है कि मेरा मन क्यों नहीं प्रभु चरणों में लगता है । 2.4 दिन या 2.4 सप्ताह भले ही आप को सही उत्तर न मिलेए परन्तु तत्पश्चात् आप को उत्तर मिलेगा । स्व.निरीक्षण की एक विशेष प्रकार की साधना है । सच्चाई से अपने आपको देखिये । हम अपने आप से झूठ बोलते हैं । मैं धोखा देता हूंए तो छुपाता हूंए अपने आपको । मैं किसी का शोषण करता हूंए तो अपने अवगुण को छुपाता हूंए भले बाहर से मैं अच्छा व्यक्ति लगूंए परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं । दादा गुरू पूज्य लाला जी महाराज ने फरमाया है कि लोग.बाग तपस्या करते है जंगलों में जाते हैंए धूप में बैठते हैंए अग्नि भी जला लेते हैंए और साधना करते हैंए परन्तु हमारे यहां की जो साधना है कि हम अपने आप को जानेंए स्व.निरीक्षण करें । ‘जैसे सागर नीर भरा ए ते ते अवगुण हमार ।’ महापुरूष कहते हैं कि जैसे

सागर विशाल हैए कितना विशाल है हमारे अवगुण इससे भी ज्यादा हैं । तो इतने अवगुणों से मुक्ति प्राप्त करना सरल काम नहीं है । दादा गुरू हमें प्रेरणा देते है कि स्व. निरीक्षण करें और किसी कापी पर नोट करें । एक.एक अवगुण को लें और उससे मुक्त होने के लिए प्रयास करेंए सच्चाई के साथ । यदि मेरा झूठ बोलने का स्वभाव है तो मैं मांनू कि मैं झूठ बोलता हूं । जो व्यक्ति अपनी गलतियों को नहीं मानता वह साधना करने का अधिकारी नहीं है । अपने साथ तो सत्य बोलो । तो पूज्य गुरू महाराज ने फरमाया है कि एक.एक अवगुण को लें लीजिएए चाहे एक जीवन भी क्यों न लग जाए । जब तक उस अवगुण से मुक्ति न मिले तब तक साधना करते रहें । वास्तविक साधना ये हैए क्योंकि जब तक गंगा स्नान की निर्मलता नही आएगीए ये चित जो है इस पर युग.युगांतर के हमारे संस्कार अंकित हैंए तब तक हमें सफलता नहीं मिलेगीए तो कृपया पूज्य लाला जी महाराज की जो पुस्तक हैए दूसरा पत्र या तीसरा पत्र है उसे गम्भीरता से पढ़ें । कम से कम प्रत्येक सप्ताह वो जो 2ए 3 पेजेस हैं सफे हैंए पढ़ने चाहिए । ये साधना आप को स्वयं करनी पड़ेगी । एक तो ये मैंने निवेदन करना हैए दूसरा आपसे मेरी प्रार्थना है कि आप यहां आए हैं तो समय का सदुपयोग करें । एक तो बिना आवश्य कता के बोले नहींए चुप रहने की कोशिश करेंए आवश्यक कोई बात करनी है तो जरूर करें ए अन्यथा भीतर और बाहर चुप रहें । बाहर तो चुप शायद हो जाएए तो भीतर को चुप करने के लिए जिस नाम का आप अभ्यास करते हैं वो करते रहिए और जो ध्यान करते हैं ये करते रहियें वो ध्यान करते रहिए चाहे आंखे खुली हैए चाहे घूम रहे है ।

यदि यह भी नहीं कर सकते है तो जो मैंने कहा है कि ईश्वर की वृष्टि कृपा जो सब जगह हो रही है । अपने आप को शांत कर लेंए स्थिर कर लेंए जो कृपा हो रही हैए वृष्टि हो रही हैए बारिश हो रही हैए उसको ग्रहण करने की कोशिश करेंए जज्ब करेंए हज़म करें । ये कोई अंधविश्वास नहीं हैए यदि आप को न अनुभव हो तो आप मुझे मिल लें ये समय फिर नहीं मिलेगा । बातें कम करेंए अति आवश्यक कोई बात हो तो अवश्य करिए । तो होता क्या है कि जब सत्संग खत्म होता है तो बाहर ऐसा मालूम होता है कि यहां कोई बड़ा मेला लगा हुआ हैए सब बोलने लग जाते हैं । तो मेरी पुनरू करबद्ध प्रार्थना है कि मौन की साधना कर सकें तो कृपया करें ।

तीसरा यहां के भाईयों को जिनके जिम्मेंए यहां का आपके प्रति प्रबन्ध वो कर रहे हैंए उनके साथ अपना पूरा सहयोग देंए जहां भी रहते हैंए वहां सफाई रखें । भीतर की भी और बाहर की भी । यहां आकर आपके मन में किसी के प्रति बुरी भावना नहीं होनी चाहिए । हे प्रभु सबका भला होए सबका भला होए सबका भला हो । और यहां की सेवा में जितना योगदान दे सकेंए कृपया वो करें ।

त्र

PARAMSANT SADGURU DR. KARTAR SINGHJI SAHEB.

ईश्वर के हुक्म के अनुसार चलें

ढ रामधुन ।। ऊँ रामए जय रामए जय जय राम । ऊँ रामए जय रामए जय जय राम ।।
पूज्य गुरूदेवए इस मंत्र को बार.बार पढ़ते और पढ़ाया करते थे । इसी मंत्र द्वारा दक्षिण के स्वामी रामदास जी ने मोक्ष प्राप्त किया । स्वामी रामदास इस मंत्र के भाव इस प्रकार व्यक्त करते थेए मैं संक्षिप्त में निवेदन करूंगा । ॐ राम। श्परमपिता परमात्मा । राम जो कण.कण में रमा हुआ है । जय रामए उस परमपिता परमात्मा की जय होए जय होए जय हो । जय.जय रामए उस परमपिता परमात्मा के चरणों मेंए मैं अपने आपको तनए मनए धन से समर्पित करता हूँ । तनए मनए धन से समर्पित करता हूँ । अर्थात भीतर मेंए मैं और मेरापन खत्म हो जाये । ये भाव हममें भी दृढ़ हो जाएए और भीतर में परमपिता परमपिता को अनुभव कर लें तो साधना में पूर्णता सफलता मिल जाएगी । तो जब भी इस मंत्र का जाप किया जाएए पूज्य गुरू महाराज के अनुसार और स्वामी रामदास के अनुसार इन शब्दों के अर्थों को याद करके इस मंत्र को पढ़ना चाहिए । एक दो बार और पढ़ लें ।
श्श्इस बात को जहनशीन कर लो स्मरण कर लोए पुख्ता कर लो कि ये दुनिया ईश्वर की है तुम्हारी नहीं है । तुम भी ईश्वर के होए और यह सब काम ईश्वर का है । वह जैसा चाहेगा वैसा होगा । अपना बोझ उस पर डाल दो । जिस हालत में रखेए खुश रहो । इन्सान की सब ख्वाहिशात पूरी नहीं होती हैं । इस बात को जहनशीन स्मरण कर लोए और पुख्ता कर लो कि ये दुनिया ईश्वर की है तुम्हारी नहीं है ।श्श
पूज्य गुरूदेव फरमा रहे हैं कि इस बात को मन में पुख्ता कर लोए पक्का कर लें कि जो कुछ धन.सम्पत्ति आपके पास है या संसार में है या संसारी लोगों के पास है वो सब ईश्वर की है आपकी नहीं है । हमारी क्या आयु है किसी की 50ए 60 या 100 हो जाती है । जब वो शरीर छोड़ता हैए सब कुछ यहीं छोड़ जाता है । वो अपने साथ नहीं ले जाता । संक्षिप्त में व्यक्ति को मोह.मुक्त होना है तथा तनए मनए धन से प्रभु चरणों से युक्त होना है । मोह मुक्त होना हैए प्रत्येक व्यक्ति स्व.निरीक्षण करके देखेए वो पाएगा कि वो अधिकांश समय अपने शरीर को सुरक्षित रखने के लिएए स्वस्थ रखने के लिएए शत्रुओं से बचने के लिए प्रयास करता रहता है । उसके पास जो धन.दौलत है उसको सुरक्षित रखने की कोशिश करता है । कोई संबंध भी हैं उनको भी वो सुरक्षित रखता है । संक्षिप्त मेंए उसमें वो मोह रूपी कीचड़ में फंसा हुआ है । जब तक व्यक्ति इस कीचड़ में फंसा रहेगा तब तक वो परमपिता परमेश्वर की चरणरज़ नहीं ले पाएगा । परमात्मा ने यह मनुष्य चोला हमें प्रदान किया है उसका मुख्य महत्व ये है कि शरीर में रहते हुए अपने आप को देखें । ईश्वर की अनुभूति करेंए अपने जीवन के लक्ष्य को समझेंए ध्यान से समझें और उस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए भरसक प्रयास करेंए परन्तु हम सब भूले हुये हैं अपने लक्ष्य

के प्रतिए ईश्वर को भूले हुए हैं । माया रूपी कीचड़ में फंस कर । इस संसार से निकलना अति कठिन है । आप देखें पिछले कुछ दिनों में हमारे देश में क्या हुआ है । क्या कोई अच्छा व्यक्ति थाए सात्विक व्यक्तित्व वाला व्यक्ति था या तामसिक व्यक्तित्व वाला व्य व्यक्ति था या संत भी था ए वो उन परिस्थितियों के प्रभाव से बचा नहींए रागद्वेष सब के दिल में उत्पन्न हुआ है । तो जब रागद्वेष में मन फंसा होगा वो प्रभु चरणों से दूर रहेगा । वह प्रभु चरणों तक नहीं पहुंचेगा । मुझे खेद से कहना पड़ता है कि मैं स्वयं भी इन खबरों को सुनकर प्रभावित हूँ और मन दुखी भी हुआए कभी अनुकूल बात सोचकर सुखी भी हुआ । ये साधना नहीं है । ये साधना नहीं हैए यह पाठ पूजा नहीं है ।

श्ना कोय बैरीए ना ही बेगानाए सगल संग हमको बन आई ।श

आत्म.स्थित व्यक्ति जो है वो ये शब्द कहता है । मन पर जो खड़े हुये हैं लोगए वो यह नहीं कहतें वो रागद्वेष में फंसे हैंए वो मेरे.तेरे में फंसे हैं । लाखों में से कोई एक व्यक्ति है जो आत्म स्थित हैए और निरन्तर आत्म स्थित रहता है । उसकी ये स्थिति है ना कोई बैरीश कोई मेरा दुश्मन नहीं है । ना कोई बेगाना।श सगल संग हमको बन आयीश जितने स्वरूप हम देख रहे हैं ए सबके साथ हमारा प्रेम का नाता है । हम सब पढ़ेलिखे हैं । सब नारे बाजी लगाते हैं परमात्मा एक हैए अल्लाह एक है । जब परिस्थितियां आती हैं तब हम अपने आदर्श को भूल जाते हैं मन रूपी राक्षस के पीछे लग जाते हैं । साधना क्या है ६ मन को साधना है । मन के साधे सब सधे।श जिसने मन को साध लियाए अर्थात मन को परमात्मा रूप बना लियाए आत्म रूप बना लिया उसने सब अड़चनों को दूर करके अपने आपको साध लिया वो साधु बन गया वो सिद्ध पुरूष बन गया । मन जीते जगजीत।श जिस व्यक्ति ने ए महापुरूष कहते हैंए अपने मन पर विजय प्राप्त कर ली है समझो उसने सारे संसार पर विजय प्राप्त कर ली है । जरा गम्भीरता से सोचिये । छोडिए संसार के व्यवहार कोए अपने व्यवहार को देखोए सारा दिन विक्षिप्त होते रहते हैं । सारा दिन ये मन विचलित होता रहता हैए कभी भी स्थिर नहीं होता है । सब लोग यही कहते हैं कि विचार बहुत आते हैं यहां तक भी कोई बात नहीं हैए विचार आने की । परन्तु देखना यह है कि ये संसार गुणों से बना हैए तमए रजए सत । और हम सबमें ये तीन गुण हैं । ये तीन गुण ही हमें बांधे हुए हैं । हम गम्भीरता से स्व.निरीक्षण करें । अपने आपको देखेंए क्या हमने इन तीन गुणों पर विजय प्राप्त कर ली है । महापुरूष कहते हैंए श्बिन गुण कीतेए भक्ति न होयश जो व्यक्ति आत्म गुणों को नहीं प्राप्त करता है उसकी भक्ति में साधना और सफलता कभी नहीं आ सकती । कोई शास्त्र देख लीजिएए किसी धर्म का देख लीजिएए इन तीन गुणों पर विजय प्राप्त करने के लिए सब साधनाएं बतलाई हैं । ये बड़ी लम्बी यात्रा है । एक दिन में हम अपने अन्तिम स्थान तक नहीं पहुंच पाएगेंए अपने लक्ष्य तक नहीं पहुंच पाएगें । साधना इन गुणों पर विजय प्राप्त करना है । यह हमारी आत्मा के अधीन यह जो बुद्धि हैए आत्मा

के अधीन हैए और मन बुद्धि के अधीन है । हम सारा दिन शरीर के सुखए दुख में फसें रहते हैं । जिव्हा के रसों में फसें रहते हैंए आखों में रूप आदि देखते हैं तो उसमें फसें रहते हैं । शरीर को सुखए दुख देने वाली बातों में फसें रहते हैं। कीचड़ रूपी संसार है उसमें फसें हैं और पूछते हैं कि हम साधना क्या करें । सभी महापुरूषों नेए चाहे वो किसी धर्म के होंए यही प्रेरणा दी है कि गंगा स्नान करोए चित्त को निर्मल करोए धो डालो इसको । तीन गुण तमए रजए सत इनसे पूर्णतरू स्वतंत्र हो जाओ न तो इनका राजए हम पर विचारों द्वारा होए न व्यवहार द्वारा हो । 24 घण्टे हम विचार उठाते रहते हैं । हमने साधना कोए ईश्वर प्राप्ति की साधना को बड़ा सरल सा समझ रखा है । परन्तु महापुरूष कहते हैं बहुत जन्म के बिछड़े थे माधो ये जन्म तुम्हारे लेखे । बहुत जन्म हो गये हैं आपसे बिछड़े हुयेए भगवान मैं यह जन्म आपके चरणों में अर्पण करता हूं और वो भी महापुरूष नामदेव जी हैंए भगवान को कहा कि मुझे वरदान दीजिए कि मैं 24 घण्टें आपके साथ रहूं । उन्होंने कहा ठीक हैए तब भी उनको सही रास्ता नहीं मिला । भगवान की कृपा से एक महाज्ञानीए ज्ञानेश्वर जी की भेंट हुई नामदेव से । उन्होंने कहा तुमने बहुत भक्ति कर ली । तुम मेरे साथ चलो । इसका मतलब यह नहीं है कि भक्ति कमजोर हैए ज्ञान बड़ा है । यह मतलब नहीं है । सिर्फ मनुष्य की यात्रा में कितनी कितनी अड़चनें आती हैंए साधना भी जो हम कर रहे हैं वो भी अड़चन डालती है और अगला कदम हम रख नहीं पा रहे हैं । जहां एक कदम रखा है वहीं खड़े हैंए यह बहुत कमजोरी हैए इसीलिए गुरू किया जाता है । इस प्रकार की साधना जो व्यक्ति कर रहा हैए वो वहीं खड़ा हैए वो आगे चलने का प्रयास नहीं करता है । उसके लिए कोई मार्गदर्शक चाहिए । साधन कोई गलत नहीं है परन्तु समय के अनुसारए आयु के अनुसारए परिस्थितियों के अनुसार इसमें तबदीली थोड़ी सी लानी पड़ती है । इसीलिए गुरू किया जाता है । जिसने वो रास्ता देखा हुआ होता है और उसमें शक्ति है कि दूसरों को भी वो रास्ता दिखला दे । परन्तु आप देखेंगे कि हम सब जिद्दी स्वभाव के हैं । मैंने एक चोला पहन लिया तो कह दिया कि बस यही काफी है । मैं इसके आगे नहीं चलूंगा । यह हम सबकी कमजोरी है किसी एक की नहीं सबकी हैए सब धर्मों की है । नामदेव जी को ज्ञानेश्वर जी द्वारा भगवान ने रास्ता दिखलाया है तब वो कहने लगें भगवान कहां नहीं है । डब्बे विट्ठल उब्बे विट्ठल ए बिन विट्ठल नाहीं संसारश्श भगवान यहां भी है वहां भी है भगवान के अतिरिक्त और कुछ है ही नहीं । वे उच्च कोटी के भक्त हैं प्रेमा भक्ति के प्रतीक हैए परन्तु एक मन में नामदेव जी को बंधन में डाल दिया है । भगवान ने ही ज्ञानेश्वर जी को प्रेरणा दी है और उनको ऊंची अवस्था में ले गए हैंए जो जिद्द थी कि मैं भगवान के पास ही रहूंगाए और जगह भगवान नहीं हैए भगवान जहां बैठे हैंए वहीं है । इस बात से हटाने के लिए ज्ञानेश्व र जी द्वारा नामदेव जी को रास्ता दिखाया । इसका मतलब यह नहीं है कि प्रेमा भक्ति ठीक साधन नहीं हैए यह बात नहीं है । नामदेव जी ने कहा था कि भगवान मैं 24 घण्टें आपके पास रहूंगाए आपको मेरे पास रहना पड़ेगा । इस जिद्द से हटाने के लिए भगवान

स्वयं ने ज्ञानेश्वर जी को प्रेरणा दी ओर इस जिद्द से नामदेव जी को हटाया । इस का मतलब यह नहीं है कि प्रेम का रास्ता गलत है ज्ञान का रास्ता सही है । यह मत सोचिए सब रास्ते सही हैं । श्अमतलजीपदह पे पित पद सवअम – ूत ।श सब रास्ते सही हैंए प्रेम में और लड़ाई में । ये मतभेद जो हम करते हैंए यह हमारे मन के कारण है । आत्मा त्मा में मतभेद कहां है ए परमात्मा में मतभेद कहां है । श्सब में रम रहा प्रभु एको ए पेख. पेख नानक बिगसाईश्श वो तो कण .कण में व्यापक है .परमात्मा को जो कण.कण में दर्शन करता हैए वही ये कहता है श्सब में रम रहा प्रभु एको ए पेख.पेख नानक बिगसाईश श । हमारी तो बुद्धि भी नहीं मानती हैए परन्तु जो सच्चे दर्शन करता हैए रोम.रोम में कण .कण में देखता हैए वह ये शब्द कहता है वो ये प्रेरणा देता हैए अरे भूले.भटके व्यक्तिए परमात्मा सब जगह हैए मंदिर में भी हैए गुरूद्वारे में भी हैए मस्जिद में भी हैए चर्च में भी हैए सब जगह हैए क्यों लड़ाई.झगड़ा करते हो । परन्तु मनुष्य मानता नहीं हैए जिद्दी है । इस जिद के कारण संसार दुखी है । इसीलिए यदि परमात्मा की कृपा हो जाएए कोई ऐसा महापुरूष मिल जाए जो भीतर.बाहर परमात्मा स्वरूप ही हैए परमात्मा ही हैए उसकी कृपा हो जाए तो हमारा उद्धार संभव है । हम सब मन के पीछे लग रहे हैं और मन कभी भी हमें इस संसार रूपी कीचड़ से नहीं निकलने देगाए चाहे व्यक्ति किसी भी मार्ग में चला जाए । जब तक मन को नहीं छोड़ेगा और परमात्मा या आत्मा चरणों को नहीं पकड़ेगा तब तक उद्धार नहीं होगा । मन पर विजय प्राप्त करना है । इस वक्त मन हमारे पर हावी है । हमारा स्वभाव बन गया है । हमारी आदतें बन गई है ये सब मन का स्वरूप है । सफलता यह कि परमात्मा तू क्या चाहता हैए हम वहीं करेंगे जो तू चाहता हैए कभी हम इस बात का अभ्यास नहीं करते हैं । और सब महापुरूष इसी बात की प्रेरणा देते हैं । ये नहीं कि एक ही धर्म के महापुरूष ऐसा कहते हैंए नहीं सभी यहीं कहते हैं । परन्तु खेद की बात है कि हम सब अज्ञान के कारण और रागद्वेष के कारण इस संसार रूपी कीचड़ में फसें हुए हैंए स्वतंत्र नहीं है । इसको शुरू से पढिये ।

ढ श्श्इस बात को जहनशीन स्मरण कर लो और पुख्ता कर लो कि ये दुनिया ईश्वर की है तुम्हारी नहीं है ।श्रूज्य गुरूदेव बता रहे हैं कि इस बात को अच्छी तरह समझ लो । और वो बात आपके व्यवहार में उतरे बिना प्रयास के आपका वो रूप बन जाए ये जो कुछ दिखता है ये हमारा नहीं है ये सब ईश्वर का है । इससे मोह ग्रस्त नहीं होना चाहिये । इस रास्ते पर चलने वाले कोए सांसारिक वस्तुओं के प्रतिए त्याग वृत्ति रखनी चाहिए । ये सब नाशवान है । मृत्यु ने सबको अपना रूप बना लेना हैए राख बना देना है । इसीलिए मोहग्रस्त नहीं होना चाहिएए आत्मज्ञान की पूजा करनी चाहिए । मैं आत्म स्वरूप हूंए मैं परमात्मा की संतान हूंए मैं और परमात्मा एक हैंए ये बातें महापुरूषों के चरणों में रहकरए उनके जीवन तथा उनके उपदेश का अनुसरण करते हुएए ये गुणए हममें भी धीरे.धीरे आने लगें । केवल बातों से कुछ नहीं होता । अभ्यास

का अर्थ है महापुरूषों के मुखारविंद से अच्छी बातें सुनना और उनको मनन करना और उनको जीवन में उतारने का प्रयास करना ।

श्श्तुम भी ईश्वर के हो और यह सब काम ईश्वर का है । वह जैसा चाहेगा वैसा होगाए अपना बोझ उस पर डाल दो ।श्श

पूज्य गुरूदेव हमें प्रेरणा दे रहे हैं । हम सब ईश्वर रूपी पिता की संतान हैं जो कुछ संपित्त आज नजर आती है सब ईश्वर की है आप की नहीं है आप अपना मोह हटा दीजिएए अपना लगाव हटा दीजिएए सब ईश्वर के चरणों में अर्पण कर देना है । पिता कभी अपनी संतान के प्रति भेदभाव नहीं करेगाए हमें योग्य संतान बनके दिखाना है और वो कैसे हो सकता है । संसार में भी आप देखोगेए जो बच्चा अपने माता.पिता की आज्ञा मानता हैए माता.पिता उसे बड़ा प्यार करते हैं । इसी तरहए इस मार्ग पर चलने वालेए जिज्ञासुओं को भी सच्चे पिता परमेश्वर की सच्ची संतान बनके दिखाना हैए वो कैसे बन सकते हैं । ईश्वर की आज्ञा का पालन करके । गुरू नानक देव अपने प्रथमए शुरू की शिक्षा मेंए प्रेरणा देते हैंए भिन्न.भिन्न साधन बताकर स्वयं ही पूछते हैं कि सफलता फिर कैसे हो दुनिया में ६ ये भी साधन कर लियाए वो भी साधन कर लियाए आखिर सफलता कब मिलेगी ६

श्श्किव सचिआरा होइएए किव कुड़े तूटे पाल ।
हुक्म रजाई चालनाए नानक रखिये नाल ।श्श

हम ईश्वर रूपी पिता के चरणों में कैसे सच्चे बनके दिखायें ६ माया की दीवार हमारे और ईश्वर के बीच बन गई है इसको कैसे तोड़ें ६ और स्वयं ही इसका उत्तर देते हैं ।

श्श्हुक्म रजाई चलानाए नानक रखिये नाल ।श्श

जो संतान पिता की आज्ञा मानता है उस संतान को पिता बहुत प्यार देता है । इसी प्रकार ईश्वर की आज्ञा को हम जानें और उस अनुसार अपना जीवन व्यतीत करें तो हमारा मोक्ष है और हमें अपने जैसा बना लेगा । प्रभु की आज्ञा का पालन करना ही सर्वश्रेष्ठ साधन है । आगे इसको विस्तार से बताया हैए परन्तु कौन करता है ६ हम अपनी मनमर्जी करते हैं मन क्या चाहता हैए संस्कार क्या चाहते हैं । उसी तरह अपना जीवन व्यतीत करते हैं । कभी हम दो मिनट नहीं लगाते है कि प्रभु की क्या मौज है ६ भीतर से हम पूछते नहीं हम अपने आपकोए हे प्रभु आप क्या चाहते हैं ६ हम क्या करें ६ हालांकि साधारण तौर पर दार्शनिक व्यक्ति ने यही बात कही हैए वो कहते हैं कि कोई काम करने से पहले सोच के बोलो । श्जीपदा इमवितम लवनत `चमांश्ण ये उसी श्रेष्ठ लक्ष्य को संक्षिप्त में समझाने की कोशिश करी है महापुरूषों ने । श्स्वदा इमवितम लवन समंचश ये कि कूदने से पहले देख लो ब्तुममें शक्ति है या नहीं । और इसी तरह हमें भीतर से अनुभव करना है ए

पता करना है कि ईश्वर क्या चाहता हैए कि क्या काम करेंए किस रास्ते पर चलें । श्हुक्म रजाई चालनाए नानक रखिए नालश् उसकी रजा में राजी ए जैसा सच्चा ईश्वर पिता है हम सच्ची संतान बनके दिखायें तो वो तभी बन सकते हैं जब सच्चे पिता की आज्ञा का पालन करें । ये अभ्यास द्वारा हो सकता है । ऐसा नहीं है कि ना होए पता ना लगेए परन्तु मन इस वक्त हावी है । ये रावण रूप बना हुआ हैए प्रभु चरणों के समीप जाने नहीं देताए तो प्रभु से हम प्रश्न ही क्या करें ए वो हमारे समीप हैए भीतर भी हैए श्बाहर भी हैए अन्दर बाहर एको जानोए ये गुरू ज्ञान बताईश्श सब महापुरूष यह कहते हैं कि परमात्मा भीतर में भी है ए बाहर में भी है । कहीं वो ऊपर नहीं बैठा हुआ या नीचे नहीं बैठा हुआए वो आपके साथ हैए उससे पूछोंए परन्तु हमें पूछना नहीं आता । सभी महापुरूष कहते हैं कि परमात्मा भीतर में है । उर्दू में कहते हैं कि भीतर ज़मीर की आवाज सुनोए हृदय की आवाज सुनोए आत्मा की आवाज सुनोए अग्रेंजी में भी यही कहते हैं । हमारी संस्कृति में तो यह है ही । हमारे पास टाइम नहीं हैए अधिकांश ये जो लड़ाई. झगड़े होते हैंए वो इसलिए होते आ रहे हैं और हो रहे हैंए वो इसीलिये कि हम भीतर में ईश्वर की आवाज को नहीं सुनते हैं । कोई नहीं सुनताए पागल हो रहें हैं । जैसे शराब आदि पिया व्यक्ति । तो वो अपना संतुलन खो बैठता है । इस तरह हम भी अवगुणों के कारणए अपनी पिछली वृत्तियों के कारणए पिछले कर्मों के कारणए हम अपने.आपको भी भूले हुये हैंए ईश्वर को भी भूले हुए हैं । ईश्वर को नहीं पहचानते और न ईश्वर की आवाज को पहचानते हैं । और महापुरूष यही कहते हैं इस माया रूपी जगत से स्वतंत्र होने का एक ही रास्ता है कि अपने सच्चे च्चे पिता का हुक्म मानो । उसका क्या हुक्म है ए उसे जानने की कोशिश करो और उस हुक्मए उस आदेश का पालन करके अपने जीवन को सफल करो ।

श्शकिव सचिआरा होइएए किव कुडे तूटे पाल ।श्श

यह माया की दीवार कैसे टूटे और स्वयं उत्तर देते है श्हुक्म रजाई चलनाए नानक रहिये नालश्श उसकी रजा मानो ए उसकी रजा में रहोए उसका हुक्म क्म मानों ए उसका हुक्म भीतर में लिखा हुआ है । हममें वो गुण नहींए हममें वो शक्ति नहीं है कि भीतर की आवाज सुन सकें । वो एक पिक्चर आयी थी उसका टाइटल था कि हम सब चोर हैं । वास्तव में हम सब पापी हैं । ना हम अपने सच्चे च्चे पिता को जानते हैं ए पहचानने की कोशिश करते हैंए ना उसके क्या आदेश हैए वो क्या चाहता है ए कभी दो मिनट भी नहीं लगाते हैं पूछने के लिए कि हे परमपिता आप क्या चाहते हैं । कितनी सरल बात है परन्तु हम सब चोर हैंए ये साधन हम करते ही नहींए कहते हैं कि हम 24 घण्टे पाठ.पूजा करते हैं । व्यक्ति को सदगुणों से अपने.आपको अति कोमल बनाना पड़ेगा । अति कोमलए आत्मा की तरह । ऐसा व्यक्ति ही भीतर की आवाज सुन सकता है । स्थूल व्यक्ति

जिसकी जुबान खाने.पीने में मस्त हैए जिसकी आखें मस्त हैं संसार की तरहए वो ये आवाज नहीं सुन पाएगाए वो ये आवाज नहीं सुन पाएगा । कोई ऐसा महापुरूष नहीं हुआ जो यह नहीं कहता हो कि अन्तर की यात्रा करोए अन्दर की आवाज को सुनोए ये तभी सम्भव होगा कि हमारे जो पांच प्रकार के शरीर हैं । ये सब कोमल हो जायेंए अति कोमलए अति सूक्ष्मए अति संवेदनशील । भीतर में आवाज होती हैए पर हमने कानों में रूई डाली हुई हैए हम बहरे हैं । आत्मिक कान हैं येए स्थूल कान आवाज नहीं सुनते हैं । सूक्ष्मए अति सूक्ष्म बुद्धि के कान आवाज सुनते हैं ।

PARAMSANT SADGURU DR. KARTAR SINGHJI SAHEB

गाजियाबाद भंडारा, 9 अक्टूबर, 1997 प्रातः

हमें अपने कर्तव्य के प्रति सदा सचेत रहना चाहिए । कल भी निवेदन किया था आज भी करबद्ध प्रार्थना करता हूँ कि ईश्वर की याद नितांत बनी रहे, एक क्षण भर भी, ईश्वर से पृथक नहीं होना चाहिए । महापुरूष कहते है । आखाँ जिवां विसरे मर जांवा । यानि स्मृति जो है, वो मेरा जीवन है, तथा विस्मृति है वो मेरी मृत्यु है । स्मृति करने से क्या लाभ है।

''तू तू करता तू भया, मुझ में रही नाहूँ,
आपा फिरका मिट गया, जित देखो तत तू ।। ''

इस स्मृति का, इस याद का, इस साधना का, परिणाम क्या है ? उसको निरन्तर याद करें, उसके स्वरूप को याद करें, उसके गुणों को याद करें और उसकी जो कृपा हम पर बरस रही है, आनन्द की वृष्टि हो रही है उसका स्मरण करें, जीवन लक्ष्य हमारा ये ही है । आप परमात्मा के अंश हैं, परन्तु हम भूले हुए हैं, इस भूल से हमने मुक्ति प्राप्त करनी है तथा साधना करते हुए, उसको याद करते हुए, तू–तू करते हुए, हमें वही बनना है, जो परम पिता परमात्मा है । वो आपका सहज स्वरूप है ही, परन्तु हम भूले हुये हैं । उस भूल से मुक्ति प्राप्त करनी है और अपने आपको पहचानना है, वही बनना है जो हमारा वास्तविक रूप है, परमपिता परमात्मा के अंश हैं, परमात्मा ही हैं । 'तत्वम–असि' तुम तो वो ही हो, क्यों भूले हुये हो । तुम ब्रह्म हो, परमात्मा हो, इस भूल को मिटाना है, परन्तु ये भूल कहां है । हम माया में फंस गये हैं । संसार के आकर्षण में फंस गये हैं । हमारा शरीर भी फंसा है, हमारा मन भी फंसा हुआ है, बुद्धि भी फंसी हुई है, हमारा पूर्ण अस्तित्व आत्ममय होता हुआ भी, अनात्मिकता में जीवन व्यतीत करता है, इस कारण हम दुखी हैं । सत्संग में आकर हमें अपने आपको पहचानना हैं । अपने कर्तव्य को देखना

है । इस शरीर को छोड़ने से पहले हमें अपनी पहचान देखनी है । परन्तु इसके लिए साधना की आवश्यकता है, साधना, ठीक है ये आँख बन्द करते हैं, जो तरीका बताया है, वो शुभ है, परन्तु साधना के साथ–साथ जीवन में भी सुधार लाना है । हमारा अंतःकरण, हमारे पापों के कारण, हमारे कुकर्मों के कारण, इतना मलीन हो चुका है, इसको धोना है, गंगा–स्नान करना है, बाहर का नहीं भीतर का स्नान करना है । हमारी संस्कृति के महान मार्गदर्शक भगवान कृष्ण, गीता में जिज्ञासुओं को जागृत करते हैं और कहते हैं कि मुझे कौन से लोग प्रिय हैं ? कौन से लोग मेरे भक्त कहलाने के पात्र हैं, कौन से ? वे उनके गुण बतलाते हैं और फरमाते हैं कि जिस व्यक्ति में ये गुण हैं, वही भक्त कहलाने के पात्र हैं और वो ही मेरा सच्चा भक्त है । गीता के 12वें अध्याय में, उस अध्याय के अंतिम आठ श्लोकों में, 13वें से लेकर 20वें तक, वो सच्चे भक्त के गुणों का वर्णन करते हैं । समय कम है और मुझे सब याद भी नहीं है, परन्तु एक श्लोक जरूर याद है । 13वां श्लोक है, मैं बारम्बार आपसे निवेदन किया करता हूँ स्वनिरीक्षण करना चाहिए । स्वनिरीक्षण करके अपने दोषों को, कमी को देखते रहना चाहिए, सच्चाई के साथ । संसार के साथ हम बेशक झूठ बोलतें हैं, बोलतें रहेंगे, परन्तु उसका विशेष महत्व नहीं है । परन्तु हम अपने साथ झूठ बोलते है । स्वनिरीक्षण का मतलब है कि सत्यता के साथ अपने आपको देखें, भीतर से कौन सी मुझ में कमी है ? कोई तीसरा आदमी देख नहीं रहा । पूज्य गुरु महाराज फरमाया करते थे, अपने अवगुणों को देखियें, प्रभु चरणों में बैठकर रोइये, उस प्रेम अश्रुओं से जो गंगा स्नान होगा उसके द्वारा आपके दोषों की निवृति होगी ।

भगवान कहते हैं कि : अद्वेष्टा सर्व भूतानां मैत्रः करूणै एवं च । निर्ममो निर्रहंकारः सम दुखः–सुखः क्षमी ।। .....

ये गुणों का पहला श्लोक है । अद्वेष्टा, मैत्री–संसार में जितने भी लोग हैं, वनस्पति है, मनुष्य है, पशु हैं, पत्ते हैं। किसी के साथ द्वेष भाव नहीं रखना है, चाहे व्यक्ति आपको कितना भी प्रकोप दे । आपके मन में उसके प्रति द्वेष न हो, शेख फ़रीद जी कहते हैं, जो तुम्हारे साथ अत्याचार करें, तुम्हारे साथ मार–पीट करें । ''जो तुम मारन मुक्कय'' । पंजाबी में पंजाबी के जनक थे । पंजाबी भाषा उन्होंने बनायी । जो भी तुम्हें दुख दे, तुम्हारी मारपीट करे, तुम उनके घर जाओं और उनके पाँव दबाओं । क्या हम ऐसा कर सकते हैं ? द्वेष भावना खत्म करने के लिए हमें इतनी तपस्या करनी पड़ेगी । मित्रों के साथ प्रेम कर सकते हैं, परन्तु शत्रु के साथ मित्रता करना बड़ा कठिन है । हमारे मन से एक क्षण क्या पूरे जीवन भर द्वेष नहीं निकलता, बड़ा कठिन है, बड़ा कठिन है । हम तो सांसारिक व्यक्ति हैं । मेरा बड़ा अनुभव है, कि अच्छे–अच्छे विद्वान, अच्छे–अच्छे योगी, अच्छे–अच्छे संत, अच्छे–अच्छे योगी, उनके मन से द्वेष भावना नहीं निकलती, बड़ा कठिन है । और परन्तु हृदय में जब तक निर्मलता नहीं आयेगी, स्वच्छता, कोमलता नहीं आयेगी, गंगा–स्नान अच्छी तरह नहीं कर लेंगे, ईश्वर की प्राप्ति नहीं हो सकती । इस हृदय में तो प्राप्ति होनी है, मलीन हृदय में ईश्वर की प्राप्ति नहीं हो सकती । हजरत ईसा भी यही कहते हैं । उनके भी मुख्य पांच उपदेश हैं । थ्वतहपअमदमे क्षमा करों, क्षमा करों, क्षमा करों । अपने मित्रों को सभी क्षमा कर सकते हैं । पति अपनी पत्नी को क्षमा कर सकता है, पत्नी, पति को क्षमा कर दे, बाप बेटे को क्षमा कर दे–नहीं जो तुम्हें दुख दें, उत्तेजना दें जैसे फ़रीद जी ने कहा है जो तुम से शत्रुता करें उनको क्षमा कर दो, अपना चित्त निर्मल रखों । क्षमा ही नहीं । ''स्वअम जील दमपहीइवनत''जो तुम्हारें साथ शत्रुता करते है उनसे प्रेम करों, उनकी सेवा करो, उन्हें क्षमा कर दो, थ्वतहपअमदमेए सवअमए`मतअपबम । महापुरूषों के जीवन से पता चलता है कि किस तरह क्षमा की जाती है, किस तरह व्यवहार किया जाता है । गुरु गोविन्द सिंह जी के नन्हें–नन्हें बच्चें, औरंगजेब ने, जिन्दा दीवारों में चिनवा दिये, कोमल बच्चे

। इस घटना को हम सुनते हैं तो पूज्य गुरु महाराज के चक्षुओं से गंगा बह उठती थी जिस बात को देख के बच्चों की दादी ने ऊंचें मकान से आत्म–हत्या कर ली । बच्चों की मां ने गुरुदेव से कहा कि मुझे कुछ ऐसा दिख रहा है कि मेरे बच्चों को बहुत कष्ट आएगा । मुझे आज्ञा दीजिए कि मैं आत्म–हत्या कर लूं । गुरुदेव ने कहा, ठीक है जैसी तुम्हारी इच्छा, दो दूसरे बच्चे हैं, देश की रक्षा के लिए, देश को स्वतंत्र कराने के लिए । औरंगजेब के अत्याचारों से हिन्दू समाज को बचाने के लिए, गुरुदेव उनसे युद्ध कर रहे हैं । दो लड़के नन्हे–नन्हे बच्चे हैं, कोई तेरह साल का है कोई पंद्रह साल के हैं, छोटी–छोटी तलवारें उनके हाथ में हैं, हजारों की संख्या में औरंगजेब की फौज है । आप पहाड़ी पर बैठकर, आप ऊंची पहाड़ी पर बैठ देख रहें है बच्चों को । हजारों की संख्या में औरंगजेब की फौज के साथ बच्चें लड़ रहें हैं कोई द्वेष नहीं । हमारे बच्चों के साथ कोई ऐसा व्यवहार करें तो क्या हमारे हृदय से द्वेष भावना हट जाएगी, निकल जाएगी, कभी नहीं । कोई मामूली सी बात हमें उत्तेजित कर देती है, महीनों लग जाते है, भीतर से द्वेष भावना निकलती नहीं है । युद्ध हो रहा है, एक सेवक, दुश्मन को, औरंगजेब की फौज को, उनमें से जो पीड़ित हो जाते हैं, बीमार हो जाते हैं, घायल हो जाते हैं, लड़ाई में उनको घाव लग जाते हैं, वो उनकी मरहम–पट्टी कर रहा है, सेवा कर रहा है, उनके मुंह में जल डाल रहा है ताकि उसके पुनः प्राण आ सकें । गुरु महाराज के सेवक यह देखकर अचरज में पड़ते है कि कहीं ये सीआईडी का आदमी तो नहीं है, ये तो हमारा भाई नहीं हो सकता, ये तो हमारे दुश्मानों की सेवा करता है जाकर, और वो मरते हैं ये उनको जीवित कर देता है । गुरु महाराज की सेवा में जाकर शिकायत की है कि एक हमारा भाई दुश्मनों की फौज में जाकर इस तरह का व्यवहार करता है, वो तो हमारा भाई नहीं हो सकता है, उन्होंने कहा कि ठीक है । उनको बुलाओं, जाकर अपनी बात कही, सेवकों ने अपनी बात दोहराई, तो उस महापुरूष से पूछा कि ये लोग क्या कह रहे हैं । वो करबद्ध होकर खड़ा हो गया, कहने

लगा, चक्षुओं से अश्रु बह रहे हैं, कहने लगे कि हे गुरुदेव मुझे आपके सिवाय कोई और दीखता ही नहीं । मैं जो यह सेवा कर रहा हूँ, आपके शरीर की सेवा कर रहा हूँ । मुझे तो कोई दुश्मन दिखता ही नहीं है और जो, आरोप लगाने वाले व्यक्ति थे उनका सर झुक गया । सबकी आंखों में प्रेम अश्रु बह रहे हैं, वो महान व्यक्ति, महान पंडित था, विद्वान था । गुरु महाराज जी ने बहुत आर्शीवाद दिया और अपने भाइयों से कहा कि हमारा युद्ध बदला लेने का नहीं है, हम तो धर्म का युद्ध लड़ रहे हैं । ईश्वर ने हमें आदेश दिया, हम ईश्वर की आज्ञा का पालन कर रहे हैं । कोई हमारा शत्रु नहीं है । ये तो एक सांसारिक कहिये आत्मिक लक्ष्य है । उस महान व्यक्ति को, श्री कन्हैया जी को, वरदान दिया है और उनको आदेश दिया है कि आज से आप अपना पृथक धर्म चलाइये और उस धर्म का उनको आचार्य बना दिया, गुरु बना दिया है उसका नाम रखा सेवा पंथी । उनका हेड क्वार्टर जगाधरी है, हरियाणा में । जो भी उस गद्दी पर विराजमान होता है वो महान पंडित, महान विद्वान । तो भगवान कृष्ण कह रहे है कि हमें भी भगवान की वास्तविक आज्ञा को समझना चाहिए कि क्षमा का मतलब क्या है ? अपने लोगों को तो सभी क्षमा कर सकते है वो भी हम नहीं करते परन्तु जो हमसे शत्रुता करता है, हमारा जीवन लेने को तैयार है, उसके साथ हमारे व्यवहार में क्षमा की भावना होनी चाहिए । क्षमा से हमारा हृदय कोमल हो उठता है, दूसरे को लाभ होगा, नहीं होगा, आपको लाभ होगा । कोमल हृदय ही ईश्वर की कृपा को जज़्ब कर सकता है, ग्रहण कर सकता है, मेरे जैसा पत्थर–दिल नहीं कर सकता है । भगवान ने ऐसे नहीं कह दिया, उन्होंने देखा कि संसार पत्थर जैसा है, कोमलता है ही नहीं, इस लिए उन्हें गोपियां प्रिय थीं । अर्थात वो व्यक्ति जो स्त्री रूप बनकर भगवान कृष्ण को रिझााने की कोशिश करते थें वो गोपी – गोपिकायें भगवान कृष्ण को प्रिय थी । भीतर में कोमलता होनी चाहिए । सब संसार के साथ, सबके साथ मित्रता है । हमारा दुश्मन है ही नहीं ।

''ना कोय बैरी, ना ही बेगाना, सगल संग हमको बन आई ।''

हमारा कोई दुश्मन है ही नहीं । संसार, विश्व ईश्वर रूप है हम किसी की सेवा करते हैं, किसी से प्रेम से बोलते हैं तो ईश्वर के साथ बोलते हैं, सारा संसार ही हमारा मित्र है – सारा संसार ही हमारा मित्र है । हमने देखा है जिन लोगों में ईश्वर का प्रेम उत्पन्न होता है वो वृक्षों को भी जाकर आलिंगन करते हैं । पत्थरों पर जाकर पूजा करते हैं । हमारे देश में मूर्ति पूजा होती है, बाहर के लोग इसे बेवकूफी कहते हैं । हमारे देश में भी कुछ ऐसे सम्प्रदाय है जो ये कहते है कि बेवकूफों का तरीका है । कौन कर सकता है पत्थर की पूजा ? पत्थर में भगवान के दर्शन कौन कर सकता है ? हम कहते है भगवान सर्वव्यापक है, तो पत्थर में क्यों नहीं है । हमारे में पूजा करने का ढंग नहीं है । नामदेव जी पत्थर की मूर्ति को दूध पिला सकते हैं । एक साल मंदिर में भगवान को बंद करके रखा है । उसी के पास रहते हैं । धन्ना भक्त को सालिग राम जी में से भगवान के दर्शन होते थे । ये कोई किस्से कहानियां नहीं है । किस्से कहानियां हमें तभी मालूम होती है क्योंकि हमारा हृदय पत्थर है, इसमें कोमलता है ही नहीं, इसमें भगवान के प्रति मित्रता है ही नहीं । कोमलता आनी चाहिए । हमारे यहां पीपल की पूजा होती है, बड़ की पूजा होती है, तुलसी जी की पूजा होती है । वो हृदय कितने कोमल हैं जो वनस्पति की पूजा करते हैं । कुछ लोग हमारे में ऐसे हैं जो ऐसी पूजा करने वाले को मूर्ख कहते है, मूढ़ कहते हैं । मुझे तो एक तरह की प्रेरणा मिलती है ऐसे लोगों से । उनको वृक्षों में भी भगवान के दर्शन होते है । मंदिर में जाकर मूर्ति में भी दर्शन होते है । सब संसार के साथ मैत्री है, मित्रता है । क्षमा, भगवान ईसा का शब्द है 'थ्वतहपअमदमे'। बिना क्षमा किए हुए आपका चित्त शुद्ध नहीं हो सकता है । संसार में कोई व्यक्ति आपको शायद मिलेगा, लाखों में कोई एक व्यक्ति मिलेगा, जिसके हृदय में किसी

प्रकार का द्वेष नहीं होगा, असंतुष्टता नहीं होगी, आसक्ति नहीं होगी । आशाओं की निराशा नहीं होगी । पिता को पुत्र से आशा है । पत्नी को पति से आशा है । पति को पत्नी से आशा है । आशाओं की पूर्ति नहीं होती है तो मन में जलन उत्पन्न होती है । वो जलन कब खत्म होगी, जब आप पूर्ण रूप से क्षमा कर दें । वो बात आपके हृदय में उसकी स्मृति रहेगी नहीं, आपके हृदय में किसी प्रकार का मोह नहीं, संसार में कोई किसी व्यक्ति आसक्ति नहीं । सेवा तो सबकी करेंगे । सब में ईश्वर के दर्शन करते हुए सबकी सेवा करते रहेंगे, परन्तु मोह नहीं है, आसक्ति नहीं है । मेरा अहंकार सबसे बड़ा दुश्मन है, सबसे बड़ा रोग है । कोई व्यक्ति नहीं मिलेगा जिसमें अहंकार नहीं मिलेगा । किसी में किसी प्रकार का अहंकार, किसी में किसी प्रकार का अहंकार । सच्ची दीनता किसी में नहीं । प्रभु को दीनता अति प्रिय है । भगवान राम, लक्ष्मण को कहते हैं । रावण पराजित तो अवश्य हो गया है परन्तु वो उच्च कोटी का विद्वान है, बाह्मण है । विद्वानों को ही बाह्मण कहा करते थे । जाति से ब्राह्मण नहीं है, गुणों से ब्राह्मण है । इसलिए हमारे इतिहास में आता है । जिन लोगों ने गुणों को छोड़ दिया, अवगुणों को अपनाया, उन लोगों को हम राक्षस कहने लगे । तो भीतर में कोमलता है, अहंकार बिल्कुल नहीं है । तब लक्ष्मण को कह रहे है जाओ, रावण से कोई उपदेश लो, कुछ सीखो । लक्ष्मण, राम को ही सब कुछ समझ रहे है । वो भला शत्रु के पास जाऐं और शिक्षा लेने के लिए ही कहें । हम लक्ष्मण की जगह पर होते तो हम भी विरोध करते कि भैया मैं तो नहीं जाऊंगा । एक दुश्मन से करबद्ध होकर जा कर मैं शिक्षा मांगू, मैं तो ऐसा नहीं करूंगा । ये अहंकार छोटे–मोटे व्यक्ति की चिन्ता नहीं करता है, बड़े–बड़े व्यक्ति को शिकार बना देता है ।

पूज्य गुरुदेव जी कहा करते थे कि साधारण व्यक्ति को अहंकार कुछ नहीं कहता है वो क्या करेंगे । वो जो हम भरते हैं कि मैं ये हूं, मेरा शरीर बलवान है, मैं सत्संगी हूँ । बहुत सारे लोग सत्संग का भी प्रचार करते है,

मैं सत्संगी हूँ, हमारे यहां बोला नहीं जाता, मौन साधन होता है, शब्दों का प्रयोग नहीं होता है, चुप रहते हैं । व्यवहार से कोई समझ ले कि हम सत्संगी हैं, सो हैं, परन्तु प्रचार नहीं करते हैं । हमारे यहां साधना जो है, हमारा जो तरीका है, रहने सहने का है, इसको मलामते कहते है । हमारे पूर्वज जो है वो अपने आप पर दोष लगा लेते थे ताकि लोग आकर्षित न हों, तो लोग दूर रहें । अपने को छिपाते हैं । तो लक्ष्मण इंकार करते हैं तो भगवान राम कहते है कि मैं तुम्हें आदेश दे रहा हूँ, जाओ । वो उनकी आज्ञा का पालन करते थे, गए हैं। रावण के सिर के पास खड़े हो गए और कहा आप मुझे उपदेश दीजिए । रावण बोलता नहीं है । वापस लौट आये कि क्या बात है, वो तो बात ही नहीं करता है, कि कहां, जाकर खड़े हुए थे ? रावण के सिर के पास । किसी से कुछ लेना हो तो दीनता अपनानी चाहिए । भिखारी बन कर जाओ, उनके चरणों के पास खड़े होकर, करबद्ध होकर प्रार्थना करना, उन्होंने कहा भइया आप ये क्या कह रहे हैं ? कहा भइया मैं ऐसा कैसे कर सकता हूँ ? लक्ष्मण ने जो कहा वह सच था । अगर हम भी लक्ष्मण की जगह होते तो हम भी ऐसा व्यवहार करते । अंहकार को छोड़ना बड़ा कठिन है, पर देखिये भगवान राम । रावण ने कितना कष्ट दिया सीता जी को । कितने समय अपने अधीन रखा । कष्ट दिया है, भगवान के हृदय में शत्रुता की भावना नहीं है । वो तो धर्म–परायण थे, कर्तव्य– परायण थे । जो उन्होंने लड़ाई–झगड़ा किया, कर्तव्य के अनुसार किया, धर्म के अनुसार किया, धर्म का पालन किया । रावण के पास गये, चरणों के पास खड़े होकर, हाथ जोड़ करबद्ध होकर, रावण से प्रार्थना की, ये तो बच्चा है, इसने भूल की, इसे क्षमा कर दो । शत्रु से क्षमा मांग रहे हैं, हाथ जोड़कर, करबद्ध होकर । भगवान ने पहले कहा है कि ऐसा क्षमावान होना चाहिए, ऐसी याचना करनी चाहिए, इसे क्षमा करना चाहिए, तब रावण रीझ गये हैं । तब लक्ष्मण को अपने पास बैठा स्नेह दिया । ये अंहकार ही है, जो हमारे रास्ते में बाधा डालता है । ईश्वर और हमारे बीच ये अंहकार ही है । कोई अंहकार से मुक्त

नहीं है, और एक और गुण बतलाया, क्योंकि हम संसार में रहते हैं, सम दुख–सुखः । इस संसार में रहकर दुख भी आयेगा और सुख भी आयेगा । सुख में भी हम विचलित हो जाते है । दुख में भी हम विचलित हो जाते है । जो व्यक्ति विचलित हो जाता है, भीतर में स्थिरता नहीं रहती है उसको साधना का लाभ कभी नहीं हो सकता । सांसारिक यात ना तो मिलेगी सो मिलेगी और जो हमारे जीवन का लक्ष्य है, परमात्मा की प्राप्ति का, हृदय में असंतुलना आ जायेगी । तो उसके परिणाम स्वरूप हम साधना सही ढंग से नहीं कर पायेंगे । सुख को भले ही व्यक्ति बर्दाश्त कर ले परन्तु वो भी बड़ा कठिन है, वो भी बड़ा कठिन है । जितने अधिक पापी होते हैं वो ही लोग होते हैं जिनको अधिक सुख होता है । आजकल देश में क्या हो रहा है । प्रत्येक पोलिटीशियन यही शोर मचा रहा है कि करप्शन, करप्शन करप्शन । करप्शन को दूर करों, वह स्वयं भी करप्ट है, संसार भी करप्ट है । अत्याचार हो रहा है आजकल । वह किस कारण हुआ । सुख के कारण हुआ । अधिक पैसा आ जाने के कारण और होड़ लग गई, होड़ लग गई, और कमाओ, और कमाओ । सब ने शोषण करना शुरू कर दिया । तो सुख भी जो है, वो भी दुख देता है । दुख में घाव लगे तो पीड़ा होती है, तो भगवान कहते है दोनों में परिस्थितियों में मेरे प्रेमी सम–अवस्था में रहें । सच्चे जिज्ञासुओं की स्थिति जो है वो समता की है । दुख का कितना ही तूफान आ जाए । सुख की कितनी वृष्टि हो जाए । सच्चा साधक सदा सम रहेगा । आगे और सात श्लोक और हैं । मैं कई दफे कह चुका हूं । महात्मा गांधी अपने अनुयायियों से कहा करते थे कि भले ही मुझे गीता में, महाभारत की बातों में मुझे पूर्ण रूप से सहमति नहीं है, परन्तु मैं, भगवान ने जो उपदेश गीता में दिया है, विशेषकर गीता का जो बारहवाँ अध्याय है, वो मुझे अति प्रिय है । और भाई बहनों से वह अनुरोध किया करते थे कि बारहवें अध्याय को रोज पढ़ना चाहिए विशेषकर तेरहवें श्लोक से लेकर अंतिम श्लोक, बीसवें तक आठ श्लोक हैं इनको अवश्य पढ़ना चाहिए तथा मनन करना चाहिए और

प्रयास करना चाहिए जो भगवान ने गुण बताये हैं, सच्चे जिज्ञासुओं के, सच्चे साधकों के, उनको अपनाने की कोशिश करनी चाहिए । वास्तव में यही अभ्यास है ।

महापुरूष भी कहते है बिना गुणों के भक्ति नहीं हो सकती । ''बिन गुण भक्ति न होय''। बड़ा कठिन है ये रास्ता । अग्नि के ऊपर के चलने का है । और कुछ नहीं तो जो हमारे सत्संग में जो हमारे जो सत्संगी भाई–बहन हैं, उनके साथ तो हमारा प्रेम बढ़े । हम क्यों एक दूसरे में दोष देखते हैं । क्षमा करें । और यदि हम किसी के दोष देखते हैं, जिसको ये पीड़ा होती कि फलां व्यक्ति मेरे में दोष देखता है, उसको भी उचित है, उसको भी मनन करना चाहिए कि मेरे में कौन सा अवगुण है? और उस अवगुण से दूर होने की चेष्टा करनी चाहिए । उसको तो ऐसा करना चाहिए, परन्तु हमें उचित नहीं है । हमारे लिए और भी अनुचित है कि हम कौओं की तरह दूसरे के अवगुण देखें । जैसे मैंनें अभी महान विद्वान, महान शास्त्री जी, कन्हैया जी की गाथा आपको सुनाई है । शत्रु की सेवा करें । शत्रु में गुण देखें । शत्रु में परमात्मा को देखें । भगवान राम, रावण में परमात्मा के दर्शन कर रहे हैं । हम लोग रावण भले ही जलाते हैं परन्तु ये बात भगवान राम के हृदय में नहीं थी । कोई भी इन दिनों में भगवान राम के गुणों का स्मरण नहीं करता है । शत्रु का भाव लेकर कुम्भकरण को जला रहे हैं । मेघनाथ को जला रहे हैं । रावण को जला रहे हैं । मैंने यदि आप से कोई अपशब्द कहा हो या बुरा कहा हो तो आप मुझे क्षमा करेंगे । आप मेरे सच्चे मित्र तभी होंगें, जब आप मुझे बतायेगें कि मेरे में ये दोष है और मेरी सच्ची साधना ये होगी कि आप जो मेरे दोष बतायेगें और मैं उसे दूर करने का प्रयास करूंगा, ये मेरी साधना है ।

आप सबको अधिकार है । मेरे पास आकर मेरे दोष बतायें यो पत्रों द्वारा दोष बतायें, मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी । ये जो मैं कह रहा हूँ ये पूज्य गुरु महाराज जी के शब्दों को दोहरा रहा हूँ । मेरा शास्त्र, मेरे वेद, माता–पिता, सब–मेरे

गुरु हैं, उनका मेरे साथ व्यवहार है । उनका जीवन, उनका उपदेश मेरे लिए वही सब कुछ है । आप यहां आये हैं, स्वनिरीक्षण करते हुए अपने आपको, मोह को त्यागने की कोशिश करें, सदगुणों को अपनाने का अभ्यास करें । सत्संग के बाद जितना समय आपको मिले, बातें मत करें, और खासकर बुरी बात तो मत करिये । जितना समय आपको मिलता है ईश्वर की याद में रहिये, नाम लेते रहिये । बेशक आपकी आंखें खुली हैं । जरूरी नहीं है कि आंख बन्द करके करें । ईश्वर की उपस्थिति का भान बना रहे । ईश्वर की कृपा बरस रही है । इस वृष्टि का भान सदा बना रहे और अन्दर से जो भगवान का नाम जो आप लेते हैं, वो नाम लेते रहिये, लगातार प्रवाह चलता रहे । भण्डारे में आने का मतलब यही है कि एक क्षण की भी विस्मृति जो है वो मेरी मृत्यु है । स्मृति मेरा जीवन है । ''आंखा जीवा, बिसरे मर जावां'' । विस्मृति जो है वो मेरी मृत्यु है । मौत ही क्यों नहीं आ जाती । मेरा मित्र मुझ से दूर है । मैं उसके प्रति, मेरे मन में कोई बुरी भावना आ जाये, या मैं उसे भूल जाऊ, इससे बेहतर है कि मैं मर ही क्यों न जाऊं । स्मृति–स्मृति का मतलब ये है कि मेरा संबंध मेरे इष्ट देवता के साथ, मेरे परमात्मा से जुड़ा है । इसलिये मैं निवेदन बार–बार कर रहा हूँ कि जो वृष्टि हम पर हो रही है उसका भान प्रतिक्षण करते रहिये, खाते–पीते, बोलते, सोते–जागते, चलते–फिरते उस वृष्टि से आप वंचित न हों । शुक्र है, शुक्र है, शुक्र है ।

ऊँ राम, ऊँ राम, ऊँ राम ।

बड़ी दीनता के साथ, मधुरता के साथ, सरलता के साथ, यही गंगा स्नान है । यदि भण्डारे का लाभ है । आशा है कि आप मेरी बातों को मान कर मुझे अपना आभारी बनायेगें । बड़ा सुन्दर भजन पढ़ा है आपने । आप पूज्य महाराज की सबसे छोटी बहू हैं । वास्तव में देवी हैं, पवित्र हृदय वाली हैं । आज जन्माष्टमी है । इस पवित्र आत्मा के चरणों में मेरा सर झुकता है । इस भजन में, जो पंजाबी भाषा में है, और आप हिन्दी प्रान्त में रहने वाली हैं । परन्तु इतने सुन्दर तरीके से और इतने सुन्दर शब्दों में इन्होंने प्रभु के प्रति

अपनी कृतज्ञता प्रकट की है । मैं उसको दोहरा नहीं सकता । बड़े सुन्दर तरीके से कृतज्ञता प्रकट की है । ये भी जिज्ञासुओं का एक महान गुण है । कृतज्ञ होना । अभी रामायण में भी आप सुन रहे थे, भगवान कह रहे हैं कि वो जीव भाग्यशाली है जिसको ये मनुष्य चोला, ये शरीर मिलता है । परन्तु दुर्भाग्य है । भगवान राम के समय में इतना घोर पाप नहीं था जितना इस वक्त हो रहा है । तब भी उस वक्त भगवान कह रहे हैं कि हम लोग इस शरीर की प्राप्ति के लिए परमात्मा की तरफ से इस पवित्र उपहार के लिए कृतज्ञ नहीं होते और इस शरीर का सदुपयोग नहीं करते । शरीर के साथ इंद्रियां भी हैं । शरीर तो हमें मिला है कि हम साधना करें । अपनी आत्मा को परमात्मा में विलय कर दें ताकि जन्म–मरण के चक्कर हमें हमेशा–हमेशा के लिए छोड़ दें । परन्तु प्रत्येक सुन्दर वस्तु के साथ कुछ आकर्षण होता है । इस तरह इस मनुष्य शरीर के साथ भी इंद्रियां हैं । व्यक्ति इन इंद्रियों के भोगों में फंस जाता है और अपने जीवन के लक्ष्य अर्थात ईश्वर की प्राप्ति को भूल जाता है । कोई जुबान के रस में फंसा है, कोई आंखों के दृश्यों में फंसा है, कोई कानों से निन्दा स्तुति सुनता है, ये मुख्य इंद्रियां है । बाकी इंद्रिया भी फंसानें वाली हैं । हम सब फंसें हुए हैं । शरीर को आराम देना, शरीर के सुख में फंस जाना । हम इन इंद्रियों में इतने फंस गये हैं कि हम अपने कर्तव्य को जो हम ईश्वर को कह कर आये हैं कि जिस वक्त हमें शरीर चोलामिल जायेगा, तो हम अवश्य निर्मल हो कर गंगा स्नान कर कर, सद्गुणों को अपना कर, घोर तपस्या कर, अपनी आत्मा, कि ऐ परमात्मा आपके चरणों में विलय करता हूँ । परन्तु प्रकृति की ऐसी माया है । माया उसको कहते हंै– जो सत्य को असत्य बताये, असत्य को सत्य बताये । हम इस अज्ञान रूपी माया में फंस जाते हैं और अपने लक्ष्य को भूल जाते हैं । ये किसी का दोष नहीं है, किसी एक व्यक्ति का दोष नहीं, ये हम सबका दोष है । हम सब भूले हुए हैं । आजकल 'ऊँ नमः शिवाय' दिखाया जा रहा है, टीवी पर । उसमें भी यही बातें आती हैं । वो लोग जो परलोक में रह रहे हैं, देवता

लोग; वो भी भूल जाते है कि उनका दूसरा कदम जो है अपनी आत्मा को परमात्मा में विलय करने का है । परन्तु देवता होते हुए भी वो राक्षसों से भी नीचे गिर जाते हैं । इतना इंद्रियों के सुख में फंस जाते हैं । बार–बार भगवान शिव उन्हें अंधकार से बाहर निकालते हैं, परन्तु फिर भी वो बार–बार, बार–बार फंस जाते हैं । अंत में उनका भी, जब तक मनुष्य शरीर धारण नहीं करते हैं, उनका उद्धार नहीं होता है । आप सब भाग्यवान हैं कि आपको मनुष्य चोलाप्राप्त हुआ है। इसी चोलामें ही आप अपने आपको पहचान सकते हैं । 'ज्ञदवू जीमलेमसि'। अपने आप को जानो कि आप कौन हैं । शरीर हैं, प्राण हैं, मन, बुद्धि, आनन्द हैं, कि क्या हैं ।

मैं कौन हूँ । महर्षि रमण कहते हैं कि अपने आप से पूछो, पूछो कि मैं कौन हूँ, क्या मैं शरीर हूँ, प्राण हूँ, मन हूँ, बुद्धि हूँ, आनन्द हूँ, कौन हूँ ? बुद्धिजीवी कहते हैं कि इसमें कौन सी कठिन बात है, मैं तो आत्मा हूँ । कहने से आत्मा नहीं होगा । बी.ए. के कोर्स की किताब रख ली अपनी लाइब्रेरी में, उससे आप बी.ए. की परीक्षा पास नहीं करते हैं । उस पुस्तक को अच्छी तरह से पढ़ना होगा । बार–बार पढ़ना होगा, बार–बार पढ़ना होगा । उसमें प्रश्न बनाकर, उत्तर देने होगें तब जा के परीक्षा भवन में जाकर अपनी परीक्षा देनी होगी । हो सकता है कि आप पास हो जाऐं तब भी सम्भावना ये है कि यदि कुछ याद नहीं किया, तो आप पास नहीं हैं । ये संसार भी परीक्षा–क्षेत्र है । तो हम भी अज्ञान में या माया में जो कुछ भी कहियें इतने फंसे हैं कि अपने कर्तव्य के प्रति सोये हुये है, कोई जागरूक नहीं है, कोई जागरूक नहीं है । आप अपने सारे दिन का जीवन देखियें कि क्या है । बोलते हैं तो जबान का रस लेते हैं, खाते हैं तो जबान का रस लेते हैं, किसी की बुराई देख किसी की निन्दा करनी है । जबान का रस लेते हैं, बुराई कानों से सुनते हैं, आंखों से बुरी–भली देखते हैं, नाक से सुगंधि आदि लेते हैं, शरीर के छूने से आनन्द महसूस करते हैं । इन सब इंद्रियों के सुख–दुख में फंसे हुए हैं । बड़े–बड़े ऋषि आते हैं, देवता आते हैं, गुरु आते हैं, हमें चेतावनी देते हैं,

गहरी नींद से जागरूक करते हैं कि मनुष्य का स्वभाव कुछ ऐसा ही है कि मनुष्य का शरीर तथा उसके साथ में जुड़ी हुई इंद्रियां हैं । इनके सुख–दुख में ही हम अपना पवित्र समय, कीमती समय खो देते हैं । मैं बार–बार गुरु महाराज की कही कहानी सुना करता हूँ । गुरु महाराज जी उसे बड़े अच्छे ढंग से सुनाया करते थे । भगवान विष्णु कहते हैं नारद जी से, अरे इस लोक में क्या हो गया है, संसार में क्या हो गया है । कोई व्यक्ति परलोक में नहीं आता है । आत्मधाम की बात तो छोड़िये । देवताओं के लोक विष्णु भगवान के धाम में परलोक जहां देखते रहते हैं वहां भी व्यक्ति नहीं आता है । मोक्ष लेने ईश्वर के धाम में, आत्म लोक में छोड़िये । देवताओं के लोक में भी लोग नहीं जाते । नारद जी की जैसी तबीयत थी, वृत्ति थी, कहा, भगवान अभी जाता हूँ, कुछ लोगों को लेकर आता हूँ । आये हैं मृत्यु लोक में एक व्यक्ति को देखा है । कि धूप है, सूर्य भगवान शिखर पर हैं, गर्मी है । एक व्यक्ति बहुत भारी बोझ सर पर रखकर जा रहा है, पसीना आ रहा है, कहता है, हे प्रभु, इस मुसीबत से मुझे बचाओं, कि कहां मैं फंस गया हूँ । मुसीबत में भगवान याद आता ही है, कभी–कभी । नारद जी पहुंच जाते हैं कि भई क्या बात है ? वो कहता है महाऋषि तुम देखते हो कि मेरी स्थिति क्या है, कितनी मुसीबत में मैं हूँ । वो कहते हैं कि कोई बात नहीं । उनका मखौल करने का ढंग था, नारद जी का । कोई नहीं ये उतारो, और तुम मेरे साथ चलो, परलोक में चलो, वहां आनन्द ही आनन्द है, सुख ही सुख है, शान्ति ही शान्ति है, तुम कहां फंसे हुए हो । ये बात जब सुनी नारद जी से । वो व्यक्ति घबरा गया । मेरी मृत्यु होगी, मृत्यु के बाद मैं जाऊंगा कि नहीं जाऊंगा, पता नहीं कि जाऊंगा कि नहीं जाऊंगा ? कहा कि महाऋषि क्या कह रहे हो, मेरे तो बच्चें हैं, उनकी देख–भाल करनी है । मैं उनके लिए मजदूरी करता हूँ । कुछ पैसे आते हैं तो पेट भरता हूँ, अपना भी, बच्चों का भी । मेरे बाद क्या होगा, मेरे बाद क्या होगा ? बच्चें तो दुखी हो जायेगें, आप अगले जन्म में आना । अगले जन्म में आपके साथ आऊंगा । नारद जी

ने बहुतेरा समझाया परन्तु समझ में नहीं आता, हमको किसी को भी समझ में नहीं आता, उस व्यक्ति का दोष नहीं था हम सबका दोष है । खैर वो समय गया दूसरे जन्म में नारद जी पधारे । अच्छी आर्थिक स्थिति थी । महाऋषि ने कहा, लो अब तो चलो । अब तो सपरिवार में कुशल है । नारद जी, क्या सब कुशल है। बच्चे बेशक सयाने हैं, बड़े हो गये हैं, परन्तु ये बलवान नहीं हैं, काम करते नहीं हैं, मैं खेत में जाता हूँ, खेत जोतता हूँ, खेती करता हूँ, उसकी उपज का जो दाम आता है मैं इनकी सेवा करता हूँ । नारद जी समझाते हैं बच्चें बड़े हो गये हैं अपने पांव पर खड़े हो सकते हैं, तुम क्यों व्याकुल हो रहे हो । तुम्हारे जीवन का जो लक्ष्य है, तुम चलो परलोक चलों । भगवान तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं । कहता है नहीं, अभी थोड़ा सा समय और है । ठीक है, पुनः आते हैं । बैल बने होते हैं, खेत जोत रहे होते हैं । कहते हैं भले मानस कि तू क्या कर रहा है, तू क्यों नहीं सुख का जीवन व्यतीत करता है । चलो अभी मेरे साथ चल । कि कितना दुख उठा रहा है । कहते हैं कि अगर मैं खेती नही जोतूंगा, उपज नहीं होगी । मेरे बच्चे तो भूखे मर जायेगें । अभी नहीं । फिर अगले जन्म में कुत्ता बना है । महाऋषि ने कहा क्या स्थिति है तेरी । मनुष्य से बैल बना, कुत्ता बन गया । क्या करता है । कहता है, महाऋषि आप समझते नहीं है बच्चें बेपरवाह हैं । चोर आ जायेंगे । धन लूट ले जायेंगे । बच्चें दुखी होंगे । तो मैं कुत्ता बनकर उनकी रक्षा करता हूँ । कोई बुरा काम थोड़ी करता हूँ । यह मनुष्य तर्क करता है । प्रत्येक मनुष्य का स्वभाव है वो तर्क करता है । सही चीज को गलत करना, गलत चीज को सही करना, प्रत्येक मनुष्य का स्वभाव है । प्रत्येक जीव का स्वभाव है । ठीक है फिर दूसरे जन्म में आये । एक बड़ी गन्दी नाली के किनारे कीड़ा बना हुआ है । नारद जी ने आकर कहा, कहां तू फंसा हुआ है । ये तेरी स्थिति है, इतनी गन्दगी में पड़ा है । वो जीव क्या कहता है कि नारद जी आप मेरे पीछे क्यों पड़ गये हैं ? इस संसार में और कोई जीव नहीं मिला ? ये हम सब के हाल हैं । आज भजन कर लेंगे, कल

भजन कर लेंगे, तीसरे दिन कर लेंगे, फिर सत्संग में जायेंगे, फिर वहां से प्रेरणा लेकर आयेंगे, फिर पुस्तक पड़ेंगे, हां जी, हां जी, । हम सब ऐसा ही करते हैं । महापुरूष तो कहते हैं कि आज का काम कल पर मत छोड़ो परन्तु मनुष्य का स्वभाव है ये पोस्ट्पोण्ड ;चवेजचवदमकद्ध करता रहता है । कल कर लेंगे, कल कर लेंगे, कल कर लेंगे । परसों कर लेंगे । हमें अपने कर्तव्य के प्रति सचेत होना चाहिए । भगवान राम कह रहे हैं अपने कर्तव्य के प्रति जागो । महात्मा गांधी के आश्रम में सुबह यह भजन पड़ा जाता था किः

''उठ जाग मुसाफिर भोर भई, ...''

यानि जीवन में भोर ''सुबह हुई है'' बड़े भाग्य है, उठकर भगवान का नाम लो । कहां सो रहे हो बिस्तर में । सभी महापुरूष आते हैं, चेतावनी देते हैं परन्तु जब सूर्य उदय होने का समय होता है, या उससे पहले, उसी वक्त व्यक्ति को प्रमाद आता है । थोड़ा और सो लेने दे, आधा घण्टा और सो लेने दे । आप उठने की कोशिश करते हैं तो धर्मपत्नी कहती है आप रात देर से सोये आप सो जाओ, थोड़ा सा सो जाओ । प्रमाद ही इस जीव का स्वभाव है । सूर्य उदय हो जाता है । धूप निकल जाती है । दफ्तर का समय हो जाता है । परमात्मा कहां है ? पता नहीं है । बच्चे कहते हैं मेरे स्कूल की तख्ती नहीं है, किताबें नहीं हैं । फलांना इन्हीं बातों में मनुष्य फंसा रहता है । जो मनुष्य का कर्तव्य है, जो उसका धर्म है वो उसको भूल जाता है । जागते हुए मनुष्य सोता रहता है । यही बात मैं आज सुबह से आपकी सेवा में निवेदन करता आ रहा हूँ । हम अपनी गाढ़–निद्रा से जागें, हम अपने लक्ष्य के प्रति जागरूक हों । महापुरुष कहते हैं कि अपने जीवन की बाजी लगा देनी चाहिए, लक्ष्य की प्राप्ति के लिए । ध्रुव को पिता ने अपनी गोद में नहीं बिठाया । लोग भले ही कह दें कि बाप ने अत्याचार किया परन्तु ये एक, ईश्वर की कृपा थी, ध्रुव को जागरूक कर दिया । यदि मेरे जगत्–पिता ने अपनी गोद नहीं लिया तो मैं अपने सच्चे पिता की गोद में जाऊंगा, और हम लोगों के चक्षु खोल दिये और इतनी तपस्या की कि आज तक वो आकाश में

प्रकाशित है–ध्रुव । सब सितारों से अधिक प्रकाश, ध्रुव में है । वो जो भी व्यक्ति अपने कर्तव्य के प्रति जागरूक हो, ध्रुव सफलता प्राप्त कर सकता है, अपने सच्चे पिता की गोद में जा सकता है, हम क्यों नहीं जा सकते, पुरूषार्थ की कमी है । अपने कर्तव्य के प्रति जो गाढ़ निद्रा है, इसके प्रति जागरूक होना चाहिए । सोना नहीं चाहिए । गाढ़ निद्रा से उठना चाहिए । भगवान के शब्दों को, जो आपने सुने हैं, उन पर मनन करें, निध्यासन करें । ये शरीर बार–बार नहीं मिलता । ये शरीर एक बार चला गया फिर पता नहीं कितनी जूनी में मिलता है । जैसे अभी नारद जी की गाथा आपने सुनी, कभी बैल, कभी कुत्ता, कभी कीड़ा, पता नहीं कभी पत्थर भी बन जाए । हजारों, लाखों साल, वर्ष लग जाते हैं, इस मनुष्य चोलाको पुनः प्राप्त करने के लिए । मनुष्य जो है अज्ञान के कारण, प्रमाद के कारण, बेवकूफी के कारण समय को व्यर्थ कर देता है । किसी एक व्यक्ति का दोष नहीं है, हम सभी दोषी हैं, हम सभी दोषी हैं । पूर्ण रूपेण से कोई जागरूक नहीं है । ईश्वर का शांति पाठ किया है, पवित्र उपदेश सुना है, तो सत्संग में आने का लाभ तभी होगा जब इन बातों को सुनेंगे, ध्यान से सुनेंगे, मनन करेंगे, विचार करेंगे और उस उपदेश को अपने जीवन में उतारने की कोशिश करेंगे । तब तो यहां सत्संग में सम्मिलित होने का लाभ होगा । नहीं तो ऐसा है कि लोग–बाग कोई आ रहे हैं, कोई सत्संग में तो आये है और दूसरी जगहों में भी । शायद सैर के लिए जा रहे हैं । सत्संग में जा रहे हैं । मैं उनको बुरा नहीं कहता । परन्तु जो आपका लक्ष्य है सत्संग में आने का उसके लिए आपको गम्भीर होना चाहिए, बहुत गम्भीर होना चाहिए । विशेषकर उन व्यक्तियेां पर जिन तक मेरी आंखें पहुंच रहीं है । क्या पता है कि भगवान हमें लेने आ जायें, इसी क्षण, एक घण्टे बाद, दस घण्टे बाद, मृत्यु को हमेशा याद रखना चाहिए । प्रत्येक सत्संगी का धर्म है कि मृत्यु को हमेशा याद रखें कि मुझे अपना काम मृत्यु के आने से पहले पूरा करना है । यदि काम पूरा कर लेंगे तो मृत्यु का भय नहीं होगा । यदि हमने अपना कर्तव्य पूरा नहीं किया तो मृत्यु पता

नहीं कब आएगी, हम मृत्यु के नाम से ही पागल हो जाएंगे । थोड़ी सी बीमारी होती है तो हमें मृत्यु का भय आ जाता है । कोई कष्ट आ जाता है तो मृत्यु से डर लगता है । डर उस वक्त से लगता है कि मैंने तो कुछ किया ही नहीं, मैं भगवान के चरणों में जाकर क्या उत्तर दूंगा ? वो भी अच्छा होता है ऐसा डर उत्पन्न होना, ऐसा डर हमारे लिए लाभदायक है । इसीलिए महापुरूष कहते है, ''दुख दारू – सुख रोग भया'' ।

त्रत्रत्रत्रत्रत्रत्रत्रत्र

PARAMSANT SADGURU DR. KARTAR SINGHJI SAHEB

प्रवचन – गाजियाबाद वसंत भंडारा, 17 फरवरी, 2002 (प्रातः)

सारा देश वसंत का त्यौहार अति प्रसन्नता के साथ मना रहा है । वसंत ऋतु में, न तो अधिक सर्दी होती है और न गर्मी होती है । जैसे अभी रामायण का पाठ आप श्रवण कर रहे थे संतों का प्रभाव होता है, शांति का प्रभाव होता है, आनन्द का प्रभाव होता है । चंचलता नहीं होती है । महान स्वरूप तुलसीदास जी ने, प्रेरणा देते हुये संसार को जागरूक करने की कोशिश की है । महापुरुषों के गुण और पापियों के अवगुण बताने का यत्न किया है । जो व्यक्ति साधना करता है, साधना का भाव है, मन साधता है । सबका मन चंचल होता है, सबके मन अतीत के संस्कारों से रंगे हुए होते हैं । तो अपने चित्त पर अंकित संस्कार जो हैं, वृतियां जो हैं, उनके अनुसार व्यक्ति संसार में रहता हुआ व्यवहार करता है । तुलसीदास जी ने भगवान राम का जीवन लेकर हमें प्रेरणा दी है कि हम बुराइयों पर विजय प्राप्त करने की कोशिश करें । सावधान भी किया है ये कि रास्ता अति कठिन है । भगवान राम तो कर सकते थे परन्तु अन्य पुरुष, अन्य मनुष्य नहीं कर पाते । तब भी साधना का मतलब है, कोशिश करो, कोशिश करो, कोशिश करो, बराबर कोशिश करें । ज्तल ंहंपदए जतल ंहंपदए जतल ंहंपद । मन एक दिन में काबू नहीं आयेगा, मन एक दिन में पवित्र, निर्मल नहीं होगा । साधना में इसके लिये अभ्यास शब्द का प्रयोग किया गया है । प्रयास करो, कोशिश करो । ज्तल ंहंपदए जतल ंहंपदए जतल ंहंपदए जतल ंहंपद । और जीवन का लक्ष्य होना चाहिए जैसे पिता परमात्मा का रूप है, गुण है वैसे हमने बनना है, इससे कम नहीं । खेद की बात है । पढ़ा–लिखा व्यक्ति भी मन की कमजोरियों में व्यस्त हो जाता है । जानता है, उसकी आँखें खुली हैं, भीतर की भी, बाहर की भी, परन्तु पिछले, व्यवहार के कारण, स्वभाव के कारण, वो बुराइयों पर विजय प्राप्त नहीं कर पाता है । दोषी वह स्वयं होता है परन्तु दूसरों को दोषी

बनाता है । ये मनुष्य का व्यवहार है । उर्दू में कहते हैंः फितरत । ये मनुष्य की फितरत है, आँख बंद करके बैठ जाना, माला आदि का जाप कर लेना काफी नहीं रहेगा । जीवन को ईश्वरमय बनाने के लिए इतना काफी नहीं रहेगा । यहां तो सत्य के यज्ञ में अपने अंहकार को, अपनी असत्यता को, अपनी बुराइयों को, भस्म कर देना है । ईश्वर का स्मरण करना, स्मरण करने का मतलब ये नहीं है कि राम–राम, राम–राम करते गये । भगवान राम के जीवन का अध्ययन करना है, और उनके गुणों को अपने जीवन में उतारना है । पूजा तभी ठीक होगी जब हम अपने इष्ट देव के स्वरूप को और उसके गुणों को धीरे–धीरे अपने जीवन में उतारें, तो तब क्या होगा ।

''तू–तू करता, तू भया । मुझ में रही न हूँ ।
आपा पिरका मिट गया, जत देखां, तत तू ।''

ईश्वर के स्वरूप को और ईश्वर के गुणों को धीरे–धीरे अपनाते जायेंगे तो हम भी ईश्वर हो जायेंगे । इसमें किसी भी धर्म के साथ कोई मतभेद नहीं है, सभी मानते हैं, परन्तु दोष मनुष्य का है, दोष मनुष्य के मन का है, ये इतना ढीठ है कि मानता नहीं । अपनी कमजोरियों के कारण गड्ढे में गिरता है, दुख भोगता है परन्तु तब भी सचेत नहीं होता है । और परमात्मा के शुभ–गुणों को, परमात्मा के सुन्दर स्वरूप को अपनाता नहीं । क्रिस्चियनिटी में परमात्मा को जिमत कहा है, और जीव को वद कहा है, जीव को जिमत के, पिता के, परमात्मा के गुणों को अपनाना है ।

जब तक ऐसा नहीं करेंगे, आपको अधिकार नहीं है कि आप ऐसा कहें कि ''प दक उल जिमत तम वदम''। ''मैं और मेरा पिता एक हैं'' । ऐसा हम नहीं कह पायेंगे । परन्तु ऐसे किये बिना जीवन में सुख नहीं मिलेगा, जीवन का कल्याण नहीं होगा । आप दुखी रहेंगे । सुख, शान्ति, आनन्द ये स्थिति आपकी नहीं आ सकती । महापुरुष कहते हैं कि 'बिन गुण कीते भक्ति न होई' । भक्ति का मतलब है साधन, पूजा । जब तक ईश्वर के गुणों को

अपने जीवन में नहीं उतारेंगे तब तक आपके साधन में सफलता नहीं आयेंगी ।

इस वक्त क्या हो रहा है, संसार में–विशेषकर अपने देश में ? चारों ओर बुराई ही बुराई है । हमने अपने पूर्वजों के जीवन को भुला दिया है, उनके गुणों को भुला दिया है । और ऐसी स्थिति हो गई है देश की, कि व्यक्ति विवश हो जाता है । बुराई करने की न चाहते हुये भी वो बुराई करने पर मजबूर हो जाता है । ये स्थिति हो रही है, साधारण व्यक्ति की नहीं, मैं कह रहा जो अध्यात्मिक पथ पर चल रहे हैं वो भी विवश हो जाते हैं । बड़ी कठिन स्थिति से हम गुजर रहे हैं, इस वक्त देश में, जिस देश को सोने की चिड़िया कहा जाता था, जिस देश से बाहर के लोग प्रेरणा लेते थे । आज उस देश की हालत इतनी हालत गिर गई है कि मैं क्या कहूं । और उस देश के हम वासी हैं, और मुझे दुख होता है कि हम सबकी स्थिति गिरी हुई है । आप साचेंगे कि हम बहुत अच्छे हैं सत्संग में आ गये हैं । ऐसा नहीं है । स्व–निरीक्षण करके देखें, तो आप पायेंगे कि हम सबसे बुरे हैं ।

''बुरा जो देखन मैं गया, बुरा न दिखा कोय ।
जो दिल खोजा आपना, कि मुझसे बुरा न कोय ।''

ये स्थिति प्रत्येक व्यक्ति की है हमारे देश में । चाहे वो दुकानकार है, चाहे वो सरकारी नौकरी करते हैं, चाहे और काई काम करता है । वो बिना बुराई के संसार में चल नहीं पाता है । वातावरण ऐसा प्रतिकूल हो गया है कि कोई सच्चाई का जीवन व्यतीत करने का प्रयास करता है, तो उसको सफलता नहीं मिलती । वो भूखा मरता है । तुलसीदास जी ने हमें प्रेरणा दी है कि हम भगवान राम के जीवन का अनुसरण करें । भगवान राम सद्गुणों के प्रतीक थे ।

' 'तू–तू करता, तू भया, मुझमें रही न हूँ ।''

भगवान राम के जीवन का अनुसरण करें । इतना अनुसरण करें कि भगवान राम में और आप में कोई अन्तर न रहे । परन्तु परिस्थितियां विवश कर रही हैं, हम नहीं कर पा रहे हैं । भले ही हम सत्संगी अपने आपको सत्संगी कहलायें । परन्तु वास्तविक जीवन हमारा एक सत्संगी जैसा होना चाहिए, वैसा नहीं है । उसका कारण यही है जो कमाई, जिस कमाई से हम भोजन खाते हैं वो पवित्र नहीं है । जिस वातावरण में हम रह रहे हैं और जो विचार हम उठाते रहते है – वो पवित्र नहीं हैं । परमात्मा के आयाम में पवित्रता ही पवित्रता है। वहां अपवित्रता नहीं जा सकती है । मैं फ़रीद जी की जीवनी पढ़ रहा था तो उसमें लिखा था कि औरंगजेब ने अत्याचार करते हुए, वह सवामन जनेऊ रोज जलाता था तब भोजन करता था, भाइयों का उसने कत्ल किया और फकीरों का कत्ल किया और बहुत कत्ल किये । उस पुस्तक लिखने वाले ने लिखा है कि औरंगजेब इतने हिन्दुओं को मुसलमान नहीं बना पाया जितना फ़रीद जी ने अपनी पवित्र वाणी द्वारा, सरल वाणी द्वारा हिन्दुओं को मुसलमान बनाया । ये बात मुझे पहले नहीं मालूम थी । उन्होंने मधुर व्यवहार द्वारा लोगों का धर्म परिवर्तन किया । और उनको बुरी बातें करना नहीं सिखाया है । अच्छी बातें सिखाई हैं, इतनी अच्छी बातें सिखाई हैं कि सिक्खों के ग्रंथ साहिब में फ़रीद जी की वाणी सम्मिलित है । प्रत्येक सिक्ख फ़रीद जी की पूजा करता है । प्रत्येक हिन्दू फ़रीद जी की पूजा करता है । ऐसी बात किसी ग्रंथ में नहीं है । फ़रीद जी के मुसलमान होते हुए भी, लाखों, करोड़ों व्यक्ति को मुसलमान बनाया, उनका कलाम गुरु ग्रंथसाहिब में सम्मिलित किया है । एक पेज नहीं, काफ़ी, उनकी वाणी काफ़ी, उसमें लिखी गई हैं । तो नेकी ही हमें सीधे रास्ते पर ले जा सकती है । तुलसीदास जी की प्रेरणा लेनी है तो हमें नेकी को अपनाना पड़ेगा । हमारा व्यवहार बहुत गंदा है । फ़रीद जी क्या कहते हैं –

‘ ‘फ़रीद बुरे दा भला कर, गुस्सा मन न हंडाए ।’’

तेरा व्यवहार ऐसा होना चाहिए कि जो बुरा व्यक्ति है तुम से वो बुरा सलूक करता है, बुरा व्यवहार करता है, तो उससे नेकी कर । कबीर साहिब की तरह उन्होंने नेकी करने की प्रेरणा दी है । मुसलमानों को नहीं सारे भारत को । भारतवासियों ने उनके कलाम को उनके व्यवहार को बहुत सराहा है । इस कारण बहुत हिन्दू मुसलमान बने । औरंगजेब इतने हिन्दुओं को मुसलमान नहीं बना सका । वो कहते हैं कि जो तुम्हें मुक्के मारे, तुम और जोर से नहीं उसको पीटो, तो क्या करें ?

'घर तिना के जाये के, पैर तिनांके चुम्म ।'

उनके घर जाओं जिन्होंने तुम पर अत्याचार किये हैं, उनके पैर चूमों । अत्याचार करने वालों के साथ अत्याचार नहीं करो अपितु उनके पैर पकड़ों, पांव चूमो । बड़ी सरल शब्दों में उन्होने अपनी वाणी उच्चारण की है । बहुत सरल, सामान्य व्यक्ति भी उनकी वाणी समझ सकता है । आज का दिन हम दादा गुरु, पूज्य लाला जी महाराज, के निमित्त मनाते हैं । आपको ताज्जुब होगा कि वे भी एक मुसलमान, शरीफ व्यक्ति के शिष्य थे । कुछ साल उनके चरणों में रहे । लाला जी महाराज के मन में विचार आया कि मैं भी गुरु के धर्म को अपना लूं, गुरु के फार्म को, धर्म नहीं कहना चाहिए । धर्म तो सबका एक है। उनके जैसी शक्ल, मैं भी अपनी शक्ल वैसी बना लूं । वो मुसलमान थे, तो गुरुदेव से निवेदन करते है कि आज्ञा दे कि मैं भी मुसलमान हो जाऊँ ?

गुरुदेव उत्तर देते हैं, ''आगे से ऐसे शब्द नहीं बोलना'' । बाहर की वेशभूषा से व्यक्ति आत्मा का ज्ञान नहीं करता है, गुरु का सच्चा सेवक नहीं बनता है । गुरु का सच्चा सेवक वो बनेगा जो उनके गुणों को अपनाएगा, आत्मा के गुणों को अपनाएगा । जैसे आप तुलसीदास जी को जो उन्होंने बड़े विस्तार से कहा है कि अपना जीवन ऐसा बनाएगा कि जैसे ईश्वर का है । बाहर के धर्मों में, बाहर के कर्मों में कुछ नहीं रखा है ये तो दिखावटी है । आंतरिक जीवन का सुधार करना चाहिए । परमात्मा के चरणों में पहुंचना है तो

परमात्मा जैसे बनना पड़ेगा चाहे उसका नाम खुदा रखो, चाहे उसका नाम राम रखो, कोई फर्क नहीं पड़ता है । ये बेवकूफ लोग आपस में लड़ते–झगड़ते हैं । पूज्य लाला जी महाराज एक बहुत ही अमीर परिवार के घ ार में पैदा हुए । आपकी माता जी बहुधा रामायण पढ़ा करती थीं । पिताजी जैसे कायस्थ होते हैं, बड़े ऊँचे, बड़े अमीर थे, जमींदार थे । वो घर में न रह कर, अपना पृथक मकान बनाया होता था जिसे बैठक कहते है । वहां रहा करते थे, और एशो–इशरत में अपना समय व्यतीत करते थे । बेटा राम भी मां के पास रहता था । वास्तव में महात्मा रामचन्द्र जी, रामायण का ही रूप थे । वहां माता से रामायण सुनी, जब अपने होश में आये तब रामायण का ही पाठ मुख्यतः करते थे ।

भगवान राम का जीवन जो था वो उनका आदर्श था । और वास्तव में उन्होंने राम बन कर दिखाया । ईश्वर की कुछ ऐसी लीला हुई, पिताजी का एक मुकद्दमा बाहर के एक जमींदार के साथ चल रहा था, पिताजी वो हार गये । अपनी सम्पति करोड़ों रुपयों की । उस वक्त करोड़ों रुपयों की कितनी कीमत थी आप जान सकते हैं । आज उस वक्त के एक रुपये की कीमत आज 1000 रूपये की है । इतना अन्तर था । परन्तु एस वक्त की कीमत के अनुसार करोड़ों की सम्पति का नाश हो गया । पूज्य लाला जी महाराज अति ही गरीबी की अवस्था में आ गये । भोजन भी ठीक से करना कठिन हो गया । पिताजी का स्वर्गवास हो गया । जहां अमीरी में रहते थे, दो घोड़ों वाली बग्गी में सवारी करते थे, वहां नंगे पाँव चलने लगे । इतनी गरीबी आ गई । 10 रूपये महीने पर आपने नौकरी करी परन्तु चेहरे पर उदासीनता नहीं आयी । ये संत की निशानी है ।

''दुख–सुख दोनों सम कर जाने, ये गुरु ज्ञान बताई ।''

समय गुजरता गया । आप घर पहुंचे हैं, बारिश हो रही थी उस वक्त, उनके घर के पहले एक मकान था उसमें मुसलमान फ़कीर रहते था । परिचय हो चुका था पहले, तो उस दिन लाला जी महाराज को आते हुए देख कर

चिंतित हुए उन्हें पुकार कर अपने पास बुलाया– ''तुम भीग गये हो, सर्दी लग रही है, पहले अग्नि के पास बैठ जाओ''। और कुछ समय बाद कहा जाओ और वस्त्र बदल कर मेरे पास आ जाओ । बिस्तर बिछा था, लौटने पर देखा अग्नि जल रही थी । उस महापुरुष ने एक ऐसी आवाज से कहा, प्यार से कहा, यहां लेट जाओ, आज रात यहीं सो जाओ । ये प्रथम दिन था जब आपको आत्मप्रसादी उस महापुरुष से प्राप्त हुई । पूज्य लाला जी महाराज कहा करते थे कि जो आनन्द उनको उस रात मिला, वो शब्दों में वर्णन करने में असमर्थ हैं । तब उनका प्रेम का सम्बन्ध बन गया । धीरे–धीरे पूज्य लाला जी महाराज उनके हो गये, और पर उस फकीर ने लाला जी महाराज को अपना लिया । अपने जैसा ही बना दिया । यहां बाहर की पोशाक का कोई मतलब नहीं है, हृदय पवित्र होना चाहिए, आत्मा न हिन्दू है, न मुसलमान, न सिक्ख है, न ईसाई है । ये सब बातें मनुष्य की बनाई हुई हैं । धीरे–धीरे समय गुजरता गया गुरुदेव की प्रगति अधिकाधिक आत्मिक रास्ते पर बढ़ती गई । समय कम है, विस्तार से कहना उचित नहीं होगा ।

उनके जीवन की कुछ घटनायें मैं आप की सेवा में पढ़ कर सुनाता हूँ ।

''मैं आपके वास्ते मुनासिब हाल यह समझता हूँ कि चाहत का अभ्यास बहालत मौजूदा आपके लिए काफ़ी हो गया । इस वक्त इसकी ज्यादा जरूरत नहीं मालूम होती लेकिन तवक्को कि इंद्रियां, मन और जिगर तत्व मगरूर होकर तरतीब न आ जायें । उस वक्त तक लताफत नहीं आती और न असली शान्ति मिलती है ।''

पूज्य लाला जी महाराज अपने प्रिय सेवक से कह रहे हैं, कि आपने साधना कर ली है, काफी समय हो गया है वो तो ठीक ढंग से हो गई, परन्तु भीतर का जो अस्तित्व है, वो आत्मिक गुणों से अभी तक रंगा नहीं । वो आत्मस्वरूप नहीं बना, परमात्म स्वरूप नहीं बना । मन अपनी मर्जी कर रहा है, वो बुद्धि के अधीन नहीं है । बुद्धि गुरु, आत्मा के अधीन नहीं है ।

इन्द्रिया उछलती हैं, व्यक्ति उसमें फंस जाता है । पूज्य लाला जी महाराज फरमा रहे हैं, जब तक इंद्रियों को आशा मेरे और इच्छाओं को, रागद्वेष को अपने वश में नहीं करोगे आप सच्चे जिज्ञासु कहलाने के अधिकारी नहीं होंगे । आत्मपथ चलने के लिये अधिकारी नहीं होगें । भीतर में पवित्रता आनी चाहिए, पवित्रता के साथ–साथ सम अवस्था आनी चाहिए । पवित्र हैं परन्तु मन चंचल है । बहुत ऊँचा बोलता है, दुख देता है, सुख देता है । वृतों में फंसा हुआ, ऐसा मन नहीं चाहिए, पवित्र मन हो । परन्तु चंचलता से रहित हो, रागद्वेष से रहित हो। सबमें परमात्मा के दर्शन करता हो । कोई भेदभाव न हो, कि ये हिन्दू है, मुसलमान है, सिक्ख है, ये ईसाई है, ये शत्रु है, ये मित्र है, ये कुछ नहीं है, ये सभी रूप परमात्मा के है । एक प्रकार की कोमलता आनी चाहिए। उदाहरण दिया करते थे जैसे स्पंज है, दो–चार बूंदें पानी की डाल दीजिये दखिऐ कि स्पंज कैसे मुलायम हो जाता है । अगेंजी में कहते है `वजिदमै' । मुलायम, मुलायम, मुलायम ।

सच्चे जिज्ञासु को, पूज्य लाला जी महाराज कहते हैं कि व्यवहार में वो सबको अपना प्रेम बाटें । उसके मन में दूसरे का शोषण करने का साहस ही न उठे । सब गुण जो है वो छंजनतंस हो, स्वभाव हो, सहज हो । बुद्धि का भी प्रयोग न करें उसका स्वभाव ही बन जाये । ''ब्रह्मज्ञानी पर उपकार'' । उसके भीतर में से उमंग उठती है, पर उपकार करके सहज में वो कोशिश नहीं करता, वो अपने आप ही होता है । गंगाजल बह रहा है वो अपने आप बह रहा है, गंगा जोर नहीं लगा रही है । ये वृत्ति, सात्विक वृत्ति वाले मनुष्य की होनी चाहिए । और ये बिना तप किये हासिल नहीं होता । आपके वास्ते जो तप लाज़िम है वो ये है 'तसकिये नफस हो जायें' । हर इंसान, जो अपने आपको कहलाता है, उसका अपनी इंद्रियों पर कन्ट्रोल हो, सहज कन्ट्रोल होना चाहिए । मन से बल लगाकर वह सहज वृत्ति नहीं है । ठीक है वो भी, करते–करते वह वृत्ति सहज हो जाये, ये आपका स्वभाव हो जाना चाहिए ।

ब्रह्मज्ञानी से कछु बुरा न भया । ब्रह्मज्ञानी चाहे भी किसी की बुराई कर दे, उससे नहीं होती ।

''आपका अभ्यास और शगल ये होना चाहिए कि आप अपने हरेक बेजा उभार और जज्बे को रोक कर मौक्किल हालत पैदा करें । एक जज्बा, और एक हालत को जिसके मग्नून हो रहे हैं उसको आप अव्वल मराकबा में अपने सामने रखें और खुदा से खलूसे–कल्ब के साथ रोजाना इस तरह दुआ कीजिये कि हालते रिक्कत–तारी हो जाये और उससे मदद चाहें कि ये आदत मगलूक हो जाये ।''

अपने स्वभाव सद्‌गुणों को अपने जीवन में उतारने का स्वभाव परिपक्व बन जाये । उससे पहले आपको कोई न कोई अभ्यास करना पड़ेगा । वो अभ्यास यही है कि अपनी इंद्रियों को वश में लायें । मन बुद्धि के अधीन हो और बुद्धि गुरु या आत्मा के अधीन । यह सहज स्थिति आ जाये । जब ऐसी स्थिति आ जाती है तो आपसे दुनिया का उद्‌धार अपने–आप होने लगता है । आप ईश्वर रूप बन जाते हैं, आप परमात्मा बन जाते हैं । जैसा परमात्मा करता है, जैसे परमात्मा के गुण हैं, वही गुण आप में हो जाते हैं । अधिक न कहता हुआ आपसे करबद्ध होकर अनुरोध करूंगा, केवल दस मिनट, पन्द्रह मिनट आंखें बंद करके बैठ जाना, इसको काफी न समझें । पूज्य लाला जी महाराज की जीवनी ध्यान से पढ़ें और उनके जीवन पर भी ध्यान दें कि उन्होंने दुख में, कैसे आत्मिक जीवन व्यतीत करने की कोशिश की और अन्त में वैसे ही बन गये । कठिनाइयां जो आती है वो व्यक्ति को पागल कर देती हैं । सुख तो अपनाने की दूर बात है, वो दुख में और दुखी हो जाता है, व्यक्ति । परमात्मा किसी की परीक्षा न ले, बहुत कठिन है ये रास्ता । बातों से ही काम में सफलता नहीं आयेगी, घोर तपस्या करनी पड़ेगी । आत्मप्रसादी ग्रहण करने के लिये बड़ा –अति कोमल चित बनाना पड़ेगा, अति कोमल । पर आपका व्यवहार जो हो सात्विक, प्रयास से नहीं हो आपकी वृत्ति हो जाये कि आप कुछ बुरा कर ही न पायें । आप यह चाहेंगे कि दूसरे चरण धोयें,

दूसरे की चरण रज लें, दूसरे की सेवा करें, दूसरे को सुख पहुंचायें, दूसरे को आत्मिक आनन्द की अनुभूति करायें, दूसरे को परमात्मा की ओर ले जाने का साहस करें । पूज्य लाला जी महाराज ने इन्हीं बातों की प्रेरणा दी है । जब तक व्यक्ति इन बातों को अपनाता नहीं है और वो उसका स्वभाव नहीं बनती `मबवदक दंजनतम नहीं बनती तब तक भीतर में कोमलता नहीं आयेगी, सच्ची दीनता नहीं आयेगी, सच्चा प्रेम उत्पन्न नहीं होगा । सच्चा प्रेम ईश्वर का स्वरूप है । ' स्वअम पे हवकए हवक पे सवअम' । प्रेम ही ईश्वर है, ईश्वर ही प्रेम है ।

''अब आप महात्मा गौतम बुद्ध के पॉच मराकबों और उनके फतूहात की ओर गौर कीजिये ।''

पूज्य लाला जी महाराज महात्मा बुद्ध की शिक्षाओं को जीवन में उतारते रहे हैं । वो महात्मा बुद्ध की प्रशंसा करते हैं, और महात्मा बुद्ध के पॉच साधन हैं, वो भाई साहब आपको पढ़कर सुनायेगें, एक–एक करके ।

 'पहला मराकबा मोहब्बत और प्रेम का ध्यान । इस ध्यान में अभ्यासी अपने दिल को इस तरह साधता है कि मैं तमाम मख़लूकात की वैवूदी यानि भलाई, यहां तक की अपने दुश्मनों की भी भलाई चाहता हूँ । इसको सर्वमैत्री कहते हैं ।'' सर्वमैत्री भाव का अभ्यास करना, अभ्यास की इतनी गहराई में चले जाना कि सबके साथ प्रेम करना, यहां तक कि जो हमसे घृणा करते हैं, जो हमसे दुश्मनी करते हैं । उनके साथ भी प्रेम करना ।

' ना कोय बैरी, ना ही बेगाना, सगल संग हमको बन आई।'

ये बात सब महापुरुषों ने कही है । परन्तु महात्मा बुद्ध इसको जीवन में प्रेक्टीकल वे (च्तंबजपबंस ूंल) में लाये है । दार्शनिक बात नहीं कही । अपने जीवन द्वारा ऐसा करके दिखाया, और अपने जो मित्र थे उनके द्वारा ऐसा करा के संसार को दिखाया । मैत्री भाव, सभी हमारे मित्र है, हम सभी के सेवक हैं ।

'ना कोय बैरी, ना ही बेगाना, सगल संग हमको बन आई।'

केवल दार्शनिक बातें नहीं, ये जरा ध्यान से सुनिए, दार्शनिक बातें तो सब सुन लेते हैं । परन्तु दार्शनिक बातों का जो परिणाम है वो हमारे जीवन में उतरना चाहिए, वो हमारा स्वभाव बनना चाहिए । चाहे अंग्रेजी में कहते है, `मबवदक दंजनतम बन जाना । अप्रयास ही हम नेकी करें, अप्रयास ही दुश्मनों के पाव चूमें, अभी तो हम सोचते रहते है कि इसने ये किया तो मैं क्या करूँ, मैं तो इसको ऐसा बना के दिखाऊगा कि ये याद करेगा। ये हम सब करते है । पूज्य लाला जी महाराज जहां हमें ले जाना चाहते है वहां करोड़ों में से कोई एक आदमी का स्वभाव ऐसा होता है । कोई दूसरे का भला सोचता है । आप व्यवहारिक रूप में आइये, दुकानदार से सौदा खरीदिये । कोई ऐसा दुकानदार मिलेगा कि नुकसान बर्दास्त कर लें और आपको सौदा दे दें । 100 रुपये की चीज है आपको 90 रुपये में दे दे । वो कोशिश करेगा की 100 रुपये के 200 रुपये ले । इसके लिये वो कई झूठ बोलेगा, और क्वालिटी भी गलत देगा । आजकल जो हो रहा है वो हर दुकानदार कर रहा है । और ींपवद बन गया है । बुराई करके व्यक्ति बुराई अनुभव नहीं करता । बल्कि खुश होता है कि मैंने उसका शोषण किया, उसमें मुझे सफलता मिली । ये स्थिति दफ्तरों में हो रही है, सरकारी दफ्तरों में प्राईवेट दफ्तरों में हो रही है, राजनीति में हो रही है, संतों के आश्रम में हो रही है औरों के यहां तो क्या कहने । मुझे कहना नहीं चाहिए, जिस जगह मैं बैठा हूँ, परन्तु ये वास्तविकता है । इस वक्त देश की बहुत ही बुरी हालत है, बहुत ही बुरी हालत । तो नेकी करनी चाहिये कोई हमसे बुराई करे हमें नेकी करनी चाहिये ।

हम विचार से व्यवहार से दूसरों से प्रेम करें, दूसरों से घृणा नहीं करें, अपने आप को बहुत ऊँचा नहीं समझें, सबका सेवक समझें । पंजाबी में कहते हैं 'दास' मैं तो सबका दास हूँ ।

'दूसरा मराकबा रहम का ध्यान ।''

''इसमें यह ख्याल किया जाता है कि तमाम् मखयूकात यानि जीव–मात्र, मुसीबत में है और अपनी ख़्याली ताकत यानि इच्छा–शक्ति के जरिये उनके रंज और गम की तस्वीर अपने दिल के सांचे पर खेंची जाती है । दूसरा मार्ग यानि दूसरा साधन ''रहम'' । दूसरा साधन है रहम, करुणा । हम बाजार से गुजरते हैं, देखते है फकीर बैठा है, जख्मी है, सारे शरीर पर उसके जख्म/घाव हो रहे हैं । हमारा हाथ जेब में नहीं जाता है कि उसको कुछ दे दें । वो भूखा है, खाना कुछ खा ले, ऐसा नहीं करते । बड़े कड़वे शब्द कहेगें कि रास्ते से दूर हो जा । कहां बैठा है। लोगों को दुख पहुंचा रहा है । जिन व्यक्तियों को चर्म रोग है, माता–पिता भी उन बच्चों को बाहर फेंक आते हैं । गांधी जी ने बहुत ही इस कर्म में अपना योगदान दिया । अब तो बात नहीं है । सरकार भी कोशिश कर रही है जिनको ऐसा रोग है, उनसे अच्छा बरताव किया जाये । लोग–बाग पहले बहुत घृणा से देखते थे ऐसे व्यक्तियों को ।''

पूज्य लाला जी महाराज, महात्मा बुद्ध के शब्द दोहरा रहे हैं कि साधक के मन में करुणा उत्पन्न होनी चाहिये । किसी का दुख देख अपना दुख समझना चाहिये । जब तक भीतर में करुणा नहीं होगी, कोमलता नहीं होगी आप साधना क्या करेगें ? आप ग्रंथ पढ़ लीजिये, शास्त्र पढ़ लीजिये क्या होगा, कुछ नहीं होगा ।

इस छोटे से हृदय को अति कोमल बनाना पड़ेगा और ये कोमलता का व्यवहार सहज में, अपने आप आये, व्यक्ति अपनी जेब खाली कर दे, दूसरे के दुख की निवृति कर दे । अपने आप हो जाये, सोचे कि मुझे देना चाहिए या कि नहीं देना चाहिए, कि ये व्यक्ति मुझे धोखा तो नहीं हे रहा । ऐसी बातें नहीं आनी चाहिये मन में । ये भी सत्य है । और रोज हम देखते हैं सड़कों पर, अपने आपको नकल कर देते है कि मुझे शरीर का रोग है, आदि–आदि ऐसी बातें कर लेते है । महापुरुष कहते है कि हमें ऐसी बातों की भी चिंता नहीं करनी चाहिए, कोई सच्चा है या झूठा है, वो अपने आप भोगेगा

दुख–सुख को । परन्तु आपके हदय में करुणा नितांत उदय होने रहनी चाहिए, स्वभाव बन जाना चाहिये । आंखें चाहे वो झूठा दिखा रहा है या सच्चा दिखा रहा है । उस शक्ल को देख के आपसे रहा न जाये, आप उस व्यक्ति की सहायता करें । करुणा, करुणा । करुणा में अति कोमलता है, अति कोमलता है । इस कोमलता को पत्थर–दिल नहीं समझ सकता है और पत्थर दिल परमात्मा के चरणों तक नहीं जा सकता है । हूँ, तीसरा ?

'तीसरा मराकबा खुशी का ध्यान । इसमें हम दूसरों की भलाई का ध्यान करते हैं । और उनकी खुशी में खुशी मनाते है ।''

तीसरे मराकबा में, वो दूसरों को प्रसन्नचित देखना चाहते हैं और उनको प्रसन्नचित देखकर स्वयं प्रसन्न होते हैं । दूसरे को दुखी देख हम सुखी होते है, ये स्वभाव नहीं होना चाहिए । दूसरे के दुख को दूर करने की चेष्टा करनी चाहिए, उसमें हमारी प्रसन्नता होनी चाहिए । हम कह देते हैं कि ये है ही ऐसा आदमी इसका स्वभाव ही ऐसा है । उसकी तो वृत्ति बन गई है । वो तो ऐसा ही करता है । हम आंख बन्द कर लेते हैं या दूसरे रास्ते से चले जाते हैं । ऐसा नहीं हो । व्यक्ति कितना पापी हो, कितना बुरा हो, सच्चे साधक को उसको बदलना है, उसके स्वभाव को बदलना है । तो शुरू–शुरू में उसकी सहायता करनी होगी चाहे वह हमारा शोषण ही कर रहा हो । मगर एक दिन ऐसा आ जायेगा कि उसको पता लग जायेगा, कि ये व्यक्ति, कितनी मेरी सहायता कर रहा है । उसके हदय में भी करुणा उत्पन्न हो जायेगी । वो भी करबद्ध होकर खड़ा हो जायेगा । प्रभु, मैंने बहुत धोखा दिया है आपको । अब मैं अपने पांव पर खुद खड़ा हूँ । जहां बुराई की इति होती है वहां नेकी की उससे ज्यादा इति होनी चाहिए । तभी तो फ़दीद साहब कहते हैं ''बुरे दा भला कर'' । बुरे को बुरा मत देखें । नहीं तो आपका चित्त भी बुरा हो जायेगा । हूँ, चौथा ।

''चौथा मराकबा कसाफ़त या नापाकी का ध्यान । इसमें बुराई के बुरे नतीजे और गुनाह और बीमारियों के अन्जामों पर गौर करते हैं ।''

ये साधन विवेक का है, शुद्ध बुद्धि का है, आंख खोलकर चलने का रास्ता है, मनन करने का रास्ता है । ये घटना, ये व्यवहार, ये कवायद, ये आचरण, इससे मुझे तथा अन्य लोगों को कुछ लाभ होगा या हानि होगी । सदगुणों को अपनाना है, अवगुणों का परित्याग करना है । धीरे–धीरे ये गुण, आत्मगुण हो जाना चाहिए । उससे आपमें कोमलता आ जायेंगी । और जब तक हृदय में कोमलता नहीं आयेगी आप परमात्मा की भक्ति कर ही नहीं सकते । सड़क पर भिखारी बैठे हैं, अंगहीन हैं । जब तक परमात्मा के उन रूपों में सेवा नहीं करेंगे, परमात्मा को कैसे प्राप्त करेंगे ? क्या परमात्मा को अमीर आदमियों की शक्ल में देखेंगे ? वो तो पाप है । क्योंकि उनकी कमाई पाप से बनी है । उनकी सेवा करने से तो पाप तो और बढ़ जाता है । अग्रेजी में कहते है 'भ्ंअम दवजे' । जिसके पास कुछ नहीं है, जिनके पास न गुण है, न पैसा है, न शरीर, न बुद्धि है । हम ऐसे लोगों से घृणा करते हैं, ऐसे लोगों से प्रेम करना है । ईश्वर रूप हैं, ईश्वर की पूजा करनी है । अमृतसर में एक आश्रम है पिंगलवाड़ा उसे कहते है । एक सरदार जी हैं, बूढ़े थे, अब शायद गुजर गये हैं, एम.ए. थे, काफी पढ़े–लिखे थे । उन्होंने यह रास्ता अपनाया, उन गांवों की, मवेशियों को, जो अंगहीन थे, उनके द्वारा न तो आय होती थी, न दूध देते थे, ऐसे मवेशियों को लोग घर–बार से बाहर निकाल देते थें, सड़कों पर छोड़ देते थे कि ये तो पाँच–सात रुपये रोज का अनाज खा जाता है, व्यक्ति है या पशु । इसको रखने का क्या लाभ है । हम सोचते हैं कि क्या लाभ होगा । तो वो महापुरुष एक साल नहीं, काफी सालों से ये काम करते आ रहे थे । इसी को उन्होंने पूजा समझा, इसी को उन्होंने पाठ समझा । लोगों के घरों से पशु ले आते और अपनी जेब में से उन पशुओं का खाना खिलाना, उनकी सेवा करना । उनके शरीर पर घाव वगैरा होते थे उनको उपचार करते थें । गउशाला तो बहुत हैं परन्तु इस तरह का पिंगलवाड़ा कम है, बस कहीं–कहीं है । साधारणतः मनुष्य लाभ देखता है कि इतना काम करूंगा इससे मुझे क्या लाभ होगा और ईश्वर प्रेमी कहता है, लाभ–हानि की

कोई बात ही नहीं, मुझे तो सुअवसर मिलना चाहिए, कि मैं किसी की योग्य सेवा कर सकूं । हूँ, पांचवा ?

''पांचवा मराकबा अमल, असूदगी, यानि शान्ति का ध्यान ।''

ये साधना क्या है ? जिसके भीतर में, हृदय में शान्ति नहीं होगी, संतोष नहीं होगा, आपने छोटा सा मकान बनाया, दूसरों का मकान देखते हैं ऐसा मकान मैं भी बनाऊंगा, आजकल बैंक से लोन मिल जाते हैं, वो बनाया, छः महीने बाद किसी और का मकान देखा कि मेरे वाला अच्छा नहीं, ऐसा होना चाहिए, इस तरह अपनी इच्छाओं और आशाओं को बढ़ाते चले जाते हैं, संतुष्टता नहीं है, अहंकारी जीव होते हैं, भीतर में कोमलता नहीं है, इसको विस्तार से कहने में बहुत समय लगेगा, संक्षिप्त में कह रहा हूँ, जब व्यक्ति असंतुष्ट होता है, तो उसको शान्ति नहीं मिलेगी । तो पाचवां पग जो है, रास्ता जो है, भीतर में संतोष होना चाहिए, संतुष्टता होनी चाहिए, और शान्ति होनी चाहिए । दूसरा कोई गाली दे गया, ठीक है, उसका कसूर नहीं है, उसको गलतफहमी हो गई, उसने गलत समझा है । इसीलिए उसको क्रोध आ गया, कोई बात नहीं उसके भीतर में भी परमात्मा बैठे हैं, प्रभु उस पर कृपा करें । वो हर तरीके से अपने भीतर में शान्ति रखे । च्मंबम व िउपदक और अपने व्यवहार से दूसरों को शान्ति प्रदान करता रहें । जहां शान्ति नहीं है, चाहे वह मंदिर में बैठा है, गुरुद्वारे में बैठा है, मस्जिद में बैठा है । क्या मतलब है कोई लाभ नहीं है । हृदय रूपी मकान में शान्ति होनी चाहिए । भगवान राम जैसे शान्त व्यक्ति की छाया हृदय में पड़नी चाहिए । भगवान महर्षि वशिष्ठ की मूर्ति हृदय में अंकित होनी चाहिए । विश्वामित्र ने, वशिष्ठ जी के सौ पुत्रों का कत्ल किया, मार डाला । विश्वामित्र क्रोध में जल रहे हैं, वशिष्ठ जी शांत । क्या हम कर सकते है ऐसा ? ये पाँच मराकबे जो पूज्य लाला जी महाराज ने महात्मा बुद्ध का नाम लेकर लिखी हैं इनको बार–बार पढ़ना चाहिए और अपने जीवन को इन मराकबों के अनुसार बनाने का प्रयास करना चाहिए । ये प्रयास ही हमारा अभ्यास है । गुणों को अपनाना ही हमारा अभ्यास है । गुणों को

नहीं अपनाएगें, बाहर का रूप दिखायेंगे कोई लाभ नहीं होगा । ईश्वर के चरणों में जाने के लिए आप सबको ईश्वर बनना पड़ेगा । ज्व`मम ळवकए पे जव इम इमबवउम ळवक । इससे कम नहीं । महात्मा जी की जीवनी के बारे में जितना कहा जाये उतना ही कम है । हम सबको, उनकी जीवनी पर, जो साहित्य है हमारे पास, वो पढ़ना चाहिए, पढ़कर मनन करना चाहिए और पढ़कर वैसा बनने की कोशिश करनी चाहिए । तब तो हम उनका दिन मनाते हैं, अन्यथा यहां आये सैर–सूर करी, खाये–पिये और फिर चले गये । यदि गंगा–स्नान करके व्यक्ति के हृदय में शान्ति उत्पन्न नहीं होती और भंडारे आदि सत्संग में आके भी आपके हृदय में शान्ति उत्पन्न नहीं हुई, सदगुणों की प्रेरणा आपने नहीं सुनी, तो मैं हाथ जोड़ के आपसे क्षमा चाहता हूँ, कुछ नहीं लाभ होगा । सत्संग से फारिग़ होकर इन पाँच मराकबों को जिसको भी किताब मिल जाये वो यहीं पढ़ के जाये । घर पहुंचने तक आपके स्वभाव में परिवर्तन हो जाये । जब वहां पहुंचों तो घर वाले आपके स्वभाव को देख इतने प्रभावित हो जायें और वो भी कहें हमें भी ले चलना भंडारे पर । आपने प्रसाद, ठीक है मिठाई का प्रसाद तो ले जायेंगे परन्तु अपने चित्त का, चित्त के निर्माण का प्रसाद उनको देना अपने व्यवहार द्वारा, अपनी वाणी द्वारा । ये सब बातें मौन में होती है ढिंढ़ोरा पीटकर नहीं होती है

त्र

PARAM SANT SADGURU DR. KARTAR SINGHJI SAHEB.

` प्रवचन – गाजियाबाद वसंत भंडारा, 15 फरवरी, 2002 (सायंकाल)

आपका हार्दिक स्वागत है । आज जितने भाई बहन मिले । करीब–करीब सबने यही बात कही कि मन स्थिर नहीं होता प्रत्येक क्षण विचार उठाता रहता है । न चाहते हुए भी मन विचार उठाता रहता है । पागलपन सी स्थिति हो जाती है । और कहा की साधना करने का क्या फल हुआ ? ये बात कोई नई नहीं है । आदि काल से मनुष्य का मन चंचलता में फंसा आ रहा है । मनुष्य का मन स्थिर होता ही नहीं । पाठ–पूजा भी करते हैं । धार्मिक पुस्तकें भी पढ़ते हैं । सत्संगों में भी जाते हैं । औ सत्संग में जो धार्मिक आदेश दिये जाते हैं उनका पालन करने की भी कोशिश की जाती है, तब भी मनुष्य, प्रतिक्षण विचारों में डूबा रहता है । परमात्मा ने मनुष्य को निद्रा का उपहार दिया है । सारा दिन तो काम करता है, थक जाता है । इस थकावट से बचने के लिए परमात्मा ने निद्रा का उपहार प्रदान किया । परन्तु नींद में भी हम विचार उठाते रहते हैं, स्वप्न लेते रहते हैं । आंख खुलती हं तो स्वपनों की बातें याद आती है । साधना में बैठते हैं, तो साधना न करते हुए, अनेकों विचारों में साधक फंस जाता है । ये स्थिति किसी एक व्यक्ति की नहीं है । और वर्तमान काल की नहीं है, आदि काल से ऐसी स्थिति मन की रही है ।

हमारे प्राचीन ग्रंथों में आजकल के महापुरूष के आदेशों में और मनोविज्ञान के शास्त्रियों ने जो आदेश दिए हैं, वो सभी इसी मतलब के लिए हैं कि मन में स्थिरता आये । मन की चंचलता से हम मुक्त हों । इस बात को विस्तार से कहा जाए तो कई दिन लग जाएगें । मैं संक्षिप्त में ही निवेदन करूंगा, गौतमबुद्ध जो बाद में महात्मा बुद्ध बन, शादी हुई, एक बच्चा हुआ, उसके बाद ज्योतिषि यों ने कहा था कि राजकुमार को सदन से बाहर नहीं भेजना है, वो हानिकारक होगा । जिस चीज के लिए मना किया जाये, उसके लिए मनुष्य

उतावला हो जाता है, ये देखना चाहिए कि बात क्या है । धर्म–पत्नी सो रही है बच्चे के साथ, इनके मन में विचार आया है कि इतने सालों से उसे सदन में कैद करके रखा हुआ है, बात क्या है ? ये मन की सहज अवस्था है, जिस बात के लिए मना किया जाए, मन उसी को जानने की कोशिश करता है । मन उसी पर विचार उठाता है। बाहर देखता है । एक बूढ़ा व्यक्ति है, चलने में असमर्थ है, छड़ी का सहारा लेकर चल रहा है । सोचता है ऐसी स्थिति उसकी भी आयेगी । राजकुमार अपने लिए कहता है, ऐसी स्थिति मेरे लिए भी आयेगी। तो ये कैसा जीवन हुआ । एक गरीब आदमी, भिखारी को देखा तो सोचने लगा कि ये क्या संसार है ? भीख मांगते है तब भी खाने को रोटी नहीं मिलती है । रोगी व्यक्ति मिला, रोग–ग्रस्त था । तब भी मन ने सोचा कि ये क्या ? ऐसा जीवन जीना कोई अच्छा नहीं होता । एक मृतक को देखा, लोग–बाग शम्शान भूमि में ले जा रहे हैं । सोचा कि क्या मैं भी मरूंगा । ऐसे चार दृश्य उन्होने देखें । तो मन में बैराग उत्पन्न हुआ कि ऐसा जीवन क्या हुआ ? मैं कोई ऐसा साधन ढूंढूगा, जिसको लोगों को बताऊंगा ताकि उनका जीवन दुख–दर्द से मुक्त हो, मृत्यु से मुक्त हो, कभी मरे ही नहीं, रोग हो ही नहीं, भूख–प्यास हो ही नहीं । बड़ी ऊँची भावना है । सदन छोड़ दिया । ये सब हदय के विचार उठ रहे हैं । और प्रभु ने कृपा करनी थी, वो चार विशेष दृश्य, गोतम जी को दिखाये । बैराग उत्पन्न हो गया, सदन का परित्याग किया । युवा स्त्री अपने बच्चे को लेकर अपनी खाट पर पड़ी है, उसको छोड़ दिया, उसकी चिंता नहीं की । सदन को छोड़ा, संसार को छोड़ा, जंगलों में चले गये खैर वहां कई ऋषि–मुनि मिले । कईयों के पास जाकर सत्संग किया । सत्संग का लाभ उठाया । और उनके बताये रास्ते, जो उन्होंने दीक्षा दी, जो उपदेश दिया । उस पर उन्होंने मनन् किया । दस–बारह साल इस तरह गुजर गये । गौतम जी को संतुष्टि नहीं हुई । आखिर वो साधना में बैठे, सोचने लगे कि कौन सा रास्ता संसार को बताऊं, ताकि वे सब तरह के कष्टों से, दुखों से, निवृत हो जाए ? छः वर्ष बैठे रहे

परन्तु कुछ नहीं सूझा । परेशान हुये, अति परेशान । कुछ दिन पश्चात पुनः बैठे समाधि में, सात सप्ताह के लिए । इनके मित्र, पॉच थे, वो छोड़ कर चले गये कि छः साल हम इनके साथ रहे, इन्होने हमें कुछ बताया ही नहीं, हमारा समय व्यर्थ गया । ये स्थिति हम सबकी है । हम सब सोचते है कि इतने साल हो गये सत्संग में आते हुए । आज प्रातः सारे, जितने भी भाई आए उन्होंने यही कहा कि सारा दिन, मन में विचार उठते रहते हैं, ये क्या सत्संग है ? वो सही थे, गलत नहीं थे । वो पांच मित्र जो थे महात्मा बुद्ध के थे, वो छोड़ गये । सात सप्ताह के बाद उन्हें प्रेरणा हुई, कि मन को स्थिर करने का अति सरल रास्ता है, कि अपने मन को केवल देखना, प्रतिक्रिया नहीं करनी । ध्यान से सुनियेगा, मन के भीतर में जो विचार उठ रहे हैं उनको केवल देखना, प्रतिक्रिया नहीं करनी । ये विचार गलत उठा है, बुरा है, भला है, ऐसा नहीं करना । इसकी भगवान बुद्ध ने अनुभूति की कुछ दिन । मनन किया व्यवहार में भी लायें । इस विचार को व्यवहार में भी लाये । तो उनका मन धीरे–धीरे स्थिर होने लगा । चंचलता से वो मुक्त होने लगे । अतीत और भविष्य को भूल गये । वर्तमान में रहने का उनको एक ढंग मिल गया । एक अति सरल साधन मिल गया । अति सरल । ध्यान से सुनियेगा । केवल अपने मन में जो विचार उठ रहे हैं उनको देखना, किसी प्रकार की प्रतिक्रिया नहीं करनी । इसको कृष्णामूर्ति में अग्रेंजी में कहा है ''छवदम तमंबजपवद ूतमदमे'' । मन को देखो परन्तु कोई रियेक्शन, प्रतिक्रिया न करो । प्रतिक्रिया शून्य हैं, संवेदना है । 2–4 दिन ऐसा किया । तुरन्त ही अपने पांच मित्रों को बनारस से ....., उनका आलिंगन किया, उनसे क्षमा मांगी भगवान बुद्ध ने कि उनका समय खराब किया । परन्तु उन्होंने बड़े हर्ष के साथ कहा कि मुझे अब रास्ता मिल गया, आप चलो अब मेरे साथ । उनको ले आये है और ये साधन बताया । है ये साधन अति सरल, परन्तु हम सब भावुक्त हो जाते हैं। कोई भी घटना होती है तुरन्त प्रतिक्रिया करते हैं, रिएक्शन करते है । तो प्रत्येक मनुष्य को सावधान रहना है । टीवी देखते हैं । खबरे आ रही हैं, उस वक्त भी हम

प्रतिक्रिया करनी शुरू कर देते हैं, और वो खबरें जब बंद होती है तो ये मन जो खबरे सुनीं, उनकी प्रतिक्रिया अपने मित्रों, अपने परिवार के सदस्यों के साथ करते है । प्रातः उठते हैं तो वो ही बात मन में रहती है । वो पार्टी विजय को प्राप्त हुई, वो पराजित हुई, उन्होने ये ढंग अपनाया, उन्होने वो ढंग अपनाया । कई भिन्न–भिन्न प्रकार की प्रतिक्रिया करते हैं । और एक दफा प्रतिक्रिया की, उसी की दोबारा प्रतिक्रिया करते है और प्रतिक्रिया की ही प्रतिक्रिया । चलता ही रहता है ये क्रम । तो उससे बचने के लिए ईश्वर ने महात्मा बुद्ध को ये प्रेरणा दी कि वो भिन्न–भिन्न इंद्रियां जो भी कार्य करती हैं, उनको, केवल देखे किसी प्रकार की प्रतिक्रि या नहीं करे । आंखे देखती हैं वो तो स्वभाव है, देखेंगे ही । परन्तु हम दृश्य को देख कर कहते हैं कि कितना सुन्दर दृश्य है, या ये कहते हैं कि ये व्यक्ति बड़ा ही बेवकूफ है । ये ऐसे काम कर रहा है । इतनी प्रतिक्रिया करते हैं कि दिन–रात विचार उठते रहते है । एक सेकंड भी नहीं दिन में मिलता, जब आप निर्विचार हों । और जब तक व्यक्ति निर्विचार नहीं होगा वो भीतर में, बाहर में सच्चाई की अनुभूति नहीं कर पायेगा । अन्य बातें और भी हैं परन्तु विशेष बात ये है, प्रतिक्रिया नहीं करना । तो मेरा भाई–बहनों के चरणों में अनुरोध है कि वे इस साधन को कुछ दिन कर के देखें । विचार धीरे–धीरे कम हो जायेगें और मन धीरे–धीरे स्थिर होता जायेगा । और धीरे–धीरे इस साधन में सिद्धि प्राप्त करने की कोई और भी बातें करनी पड़ेगी और जैसे भोजन सात्विक, सात्विक कमाई का होना, सात्विक वायुमंडल में बैठकर भोजन करें । राग़द्वेष मन से निकाल दो । न किसी से राग है दिल में और न किसी से द्वेष है । गणेश जी की तरह आपका आसन होना चाहिए, आपकी स्थिति होनी चाहिए । भगवान शिव भी बैठे हैं, मगर उनके भीतर में तेज है, बहुत तेज है । परन्तु भगवान गणेश के मन में स्थिरता है, शान्ति है । उनको बच्चे के रूप में दिखाते हैं । भगवान गणेश में कोई राग या कोई द्वेष नहीं है । भगवान शिव ने सिर काटा, दुबारा हाथी का सिर लगा दिया । गणेश जी ने कभी जीवन में

भगवान शिव को बुरा–भला नहीं कहा । परन्तु हम सबके भीतर में राग और द्वेष ने घर किया हुआ है । हम राग–द्वेष के विचार उठाते रहते हैं । वो व्यक्ति ऐसा है । ये सब विचार करते है, या यह घटना ऐसी हो गई है, वो हो गई है, हर घटना के साथ मन बंधा हुआ है । हर व्यक्ति के साथ ये मन बंधा हुआ है । पता नहीं किन–किन व्यक्तियों, घटनाओं के साथ, इतिहास के साथ बंधा हुआ है । वही विचार आते रहते हैं, वही विचार आते रहते हैं । कोई परिवार के साथ बंधा हुआ है । दो प्रकार का बंधना है । राग और द्वेष । प्रत्येक व्यक्ति इसमें फंसा हुआ है । तो मुख्य साधन जो भगवान बुद्ध ने अपने साथियों को बताया और सारे संसार को बताया, वो यही है, कि संसार में जो कुछ हो रहा है देखो, वो आखें देखती है । परन्तु प्रतिक्रिया नहीं करनी है । कान सुनेंगे ठीक है, कोई प्रतिक्रिया नहीं करनी है । भीतर में विचार उठ रहे हैं । उनकी कोई प्रतिक्रिया नहीं करनी है । जुबान रसा–स्वादन करेगी । मन प्रतिक्रिया करेगा । ये बोलने और सुनने में तो बहुत सरल साधन लगता है । परन्तु समय लगता है इस साधन में, सिद्धि प्राप्त करने के लिये । परन्तु है बहुत ही अच्छा साधन है । महात्मा बुद्ध ने तो कहा है कि केवल इस साधना द्वारा व्यक्ति मोक्ष की प्राप्त कर सकता है । और इसमें कोई संदेह नहीं । रागद्वेष से मुक्त होना कोई सरल बात नहीं है इसी के कारण ही सारे विचार आते हैं । हम बोलते भी हैं । हमारा जो कर्म होता है दिन में, दैनिक कर्म होता है, इसी बात पर निर्भर है । किसी के भीतर में शांति नहीं है । सारा दिन न करें, तो कुछ टाइम इस अभ्यास को करके देखें ।

मन को केवल देखें । मन को केवल देखें कि ये क्या विचार उठा रहा है । आशायें, इच्छायें उठा रहा है । देखें, सब कुछ देखें । परन्तु प्रतिक्रिया नहीं करें । बाकी जो साधन करते हैं, वो करियें । मेरा विश्वास है कि जो विचारों की दौड़–भाग लगी रहती है प्रति समय, ये साधन करने से, सारा दिन के लिए नहीं तो थोड़े से समय के लिए आपको विचारों से मुक्ति मिल सकती है,

शान्ति मिल सकती है । हमारे साधन में लगन चाहिए जो साधन आप कर रहे हैं उसमें अति–तीव्र लगन होनी चाहिए । तीव्र लगन से भी विचारों पर काबू किया जा सकता है । एक ही विचार को विससवू करें, पागल हो जाएं, उस विचार के लिए, उस ध्यान के लिए, हम कर नहीं पाते हैं । हम खाना खा रहे हैं तो खाने की तरफ ही ध्यान होना चाहिए । ये नहीं कि मेरा व्यापार कैसा चल रहा है। ये नहीं कि उसमें हानि या लाभ हैं । खाते वक्त ही सब याद आता है, सोते वक्त ही याद आता है । कभी–कभी नींद नहीं आती । इस स्वभाव को बदलना चाहिए । सभी महापुरूष कहते है और अग्रेंजी में भी कहा है शवितहपअम – वितहमजश । क्षमा करने का अभ्यास करें, क्षमा करें और भूल जाएं । इस अभ्यास को पक्का करें, और जो साधन बतलाया गया है उसको करते रहें । अभ्यास का मतलब ही है 'ज्तल ंहंपदए जतल ंहंपदए जतल ंहंपद'। बार–बार, बार–बार, बार–बार करते रहिए । भूलिए नहीं, उस साधन को । और कभी मन में अधिक चंचलता आ जाए तो महात्मा बुद्ध के साधन को कर सकते हैं । अपने मन को केवल देखना । महापुरुषों ने भी इसकी प्रेरणा दी है कि अपने मन को देखो । कोई प्रतिक्रिया नहीं करो । परन्तु हम अपने प्रति सतर्क नहीं रहते हैं । गंभीरता का अभ्यास करना चाहिए । चंचलता अति हानिकारक है । हम सबका स्वभाव ही हो गया है चंचलता । गंभीरता है ही नहीं । तो विचार आएगें, और कई बार तो अधिक विचार आने के कारण व्यक्ति की स्थिति पागल जैसी हो जाती है । आप यहां सत्संग में पधारे हैं । जिस नाम का अभ्यास करते हैं उसका अभ्यास करते रहिए, बाकी बातों को छोड़ दें । तीर्थों पर जाते हैं, स्नान करते हैं, तो वहां कुछ शपथ लेते हैं, कसम उठाते हैं कि आगे से मैं ऐसा नहीं करूंगा । कोई कहता है कि मैं फलाना सब्जी नहीं खाऊंगा, तरकारी नहीं खाऊंगा । जो उसको अच्छी नहीं लगती, वो वहां गंगा जी को कह आता है कि मैं ये लौकी नहीं खाऊंगा तो ये त्याग नहीं है । मन की जो कमजोरी है उसके लिए दृढ़ संकल्प लेना

है । मैं ये बात नहीं करूंगा । झूठ बोलने की आदत है, मर जाऊंगा मगर झूठ नहीं बोलूंगा ।

राजा हरीश्चंद्र की तरह रहो, तब तो वहां गंगा जी के चरणों में बैठकर जो शपथ उठाई है तो उसका लाभ होगा अन्यथा कुछ नहीं । तो व्यक्ति को स्वयं देखना चाहिए अपने मन को कि किस प्रकार के विचार आ रहे है और उनसे कैसे मुक्त हो, व्यक्ति बंधा रहता है–संबंधों में, विचारों में, व्यवहार में–ये भूलता नहीं है । किसी ने कोई बुरी बात कह दी, बरसों उसकी याद रहती है । वो भूलता नहीं है। क्षमा नहीं करता है । तो इस मन की चंचलता से बचने के लिये, एक तो मन में दृढ़ता होनी चाहिए, मनन करना चाहिए कि इन बातों से कैसे मुक्त होऊं, और अपने साधन के प्रति गम्भीरता होनी चाहिए । यदि साधना के परिणाम अनुसार आपका मन स्थिर नहीं होता तो कोई हर्ज़ नहीं है । तो महात्मा बुद्ध ने जो रास्ता बतलाया है, कुछ समय के लिए, उसका अभ्यास करना चाहिए । परन्तु है बड़ा कठिन, क्योंकि हमारा जीवन सात्विक नहीं है । चाहे हम सरकारी नौकरी करते हैं, चाहे हम वाणिज्य करते हैं, चाहे हम और कोई बात करते है, आप देख लीजिए प्रत्येक व्यक्ति के जीवन का अधर्म है । कोई दुकानदार सच्चाई का व्यवहार नहीं करता है, वाणिज्य नहीं करता है । आजकल दफ्तरों में देख लो कि कितने अफसर लोग घूस ले रहे हैं । आजकल इलैक्शन हो रहे है । मतदान हो रहा है । रोज अखबार में टीवी में देख रहे हैं, क्या–क्या बातें हो रही हैं । एक आदमी का दोष नहीं है । ये देश की सभ्यता ही ऐसी बन गई है । लोग समझते हैं कि काम निकालना चाहिए । झूठ बोलना या न बोलना, इसका क्या ? काम निकालो किसी तरीकें से । दूसरे की जेब काटो जिस तरह से भी । ये स्थिति किसी एक व्यक्ति की नहीं है । हम सब की है । आप गंभीरता से स्व–निरीक्षण करेंगे तो हमारा भोजन सात्विक कमाई से नहीं बनता है । हम झूठ बोलने से हिचकिचाते नहीं हैं । हेसीटेट (भ्मेपजंजम) नहीं करते हैं किसी को धोखा देने से हम, बाज नहीं आते । ये एक समान सभ्यता हमारे देश की बन गई है ।

हमारे देश की क्या, करीब–करीब सभी मुल्कों की ऐसी होती जा रही है । वो तो कहते है ये तो राजनीति है । कोई ऐसा कहता है कि अगर ऐसा न करें तो पेट कैरे भरें । तो यदि ऐसे कर्म करने हैं तो मन की चंचलता कभी खत्म नहीं होगी । हमारी संस्कृति और अन्य संस्कृतियों ने अन्न पर विशेष महत्व दिया है । जैसा अन्न वैसा मन, उन सभी महापुरूषों ने कहा है । तो अन्न को तो सत्यता के साथ, गंगा स्नान करना है । जिसका भोजन सात्विक कमाई से बना हुआ होना चाहिए, इसके विचार सात्विक होने चाहिए। इसका समाज सात्विक, इसका वातावरण सात्विक, भीतर–बाहर वही सात्विकता होनी चाहिए । ईश्वरता होनी चाहिए । वो नहीं हो रही । हमें झूठ बोलने में कोई हिचकिचाहट नहीं है । हमें दूसरे की जेब काटने में कोई डर नहीं लगता । तो मैं आपकी आलोचना नहीं कर रहा, आपके दोष नहीं देख रहा ।ये स्थिति हम सबकी है । हम सब चोर हैं । तो जो व्यक्ति चाहता है कि उसके मन में स्थिरता आ जाये, उसके लिये आवश्यक है कि भीतर में कोमलता होनी चाहिए । कोमलता नहीं आयेगी, जब तक ये मन सच्चाई को नहीं अपनायेगा । सात्विक भोजन, सात्विक कमाई, सात्विक व्यवहार, सात्विक विचार, हमारी साधना भी सात्विक नहीं है । बाकी कर्मों को तो छोड़िये । मैं उन भाई–बहनों का आभारी हूँ जिन्होंने ये कहा है कि हमारा मन 24 घंटे दौड़–भाग करता रहता है । ऐसा होते हुये सत्संग में आने का क्या लाभ । 2–4 व्यक्तियों ने आज कहा । ये दोष उनका नहीं है, ये दोष मेरा भी है । मैं अपने आपको महात्मा बुद्ध की तरह पेश नहीं कर सका, पूज्य गुरु महाराज की तरह पेश नहीं कर सका, नही ंतो ये बात आपके मुखारबिंद से नहीं निकलती । दोष मेरा है । परन्तु परिस्थितियां ही हमारे देश की ऐसी हो गई है । यह तक हो गया है कि महापुरूषों के प्रवचन आते हैं टीवी वगैरा पर, लोग–बाग प्रतिक्रिया करते हैं कि इनकी च्तपअंजम सपमिए जीवन देखो, ये कैसा है, दुखः होता है उस वक्त, उनकी प्रतिक्रिया करते हैं । तो सेवक की भी प्रतिक्रिया करते होगें । तो ठीक है । तो कृपया, मेरा नम्र निवेदन है, कि

कोशिश करें जहां तक हो सके हमारा जीवन पवित्र हो, शुद्ध हो । सत्य करना, सत्य को न छोड़ें जहां तक हो सके । ऐसा करने से भीतर में कोमलता आएगी, भीतर में कोमलता आऐगी, तो बाहर से आत्मा का जो प्रकाश पड़ रहा है, वो आपके हृदय में समाता जायेगा, प्रवेश करेगा, और धीरे–धीरे आपके चित को निर्मल कर देगा । परन्तु इतना सरल नहीं है, जितना मैं कह रहा हूँ । इसलिए साधना को अभ्यास कहते हैं । हम गिरेंगे तो जरूर परन्तु हमारा धर्म होना चाहिए के गिर कर होश में आए कि क्यों गिरे ? उस गलती को दुबारा नहीं करें ।

पूज्य गुरु महाराज जी कहा करते थे, कि मन को निर्मल करने के लिए, एक जन्म नहीं, कई जन्म लग सकते हैं । 'बहुत जन्म बिछड़े थे माधो, ये जन्म तुम्हारे लेखे' । कह रविदास आसलग जीवों, चिर पाए दर्शन तेरे' । सब महापुरूषों ने अपने लिए तो कहा ही है । संसार के लिए भी कहा है । ये रास्ता इतना सरल नहीं है कि जितना हम समझते हैं । कबीर साहिब ने अपनी कमाई से अपना पेट भरा । ये काम इसलिए किया कि उनका भोजन सात्विक कमाई का हो । जैसा अन्न वैसा मन । यदि हमारा भोजन ही असत्य का होगा, हमारे विचार शुद्ध नहीं होगें । हमारा संग शुद्ध नहीं होगा, तो हमारा मन कैसे पवित्र हो सकता है ? अपवित्र मन तो विचार उठाता ही रहेगा । साधना ये है । अंतिम चरण तो ये है कि मन को पवित्र कर, आत्मा में प्रवेश करना है और वहीं रह जाना है । आत्मा में ही रह जाना है । आत्मा ही बन जाना है । तो ये इतना सरल काम नहीं है, जितना मैं निवेदन कर रहा हूँ, बहुत कठिन रास्ता है । इस पर आप भी विचार करें । यदि कोई कठिनाई आती है तो आप सेवक से बात कर सकते हैं । मैं भी कोशिश कर रहा हूँ और आप से भी करबद्ध प्रार्थना है कि आप भी प्रयास करें कि किसी तरह से ये चित्त शुद्ध हो जाए,

निर्मल हो जाए, आत्ममय हो जाए, आत्मा ही हो जाए, परमात्मा ही हो जाए । ऊँ ।

च्तंउेंदज ैकहनतन क्तण् झंतजंत ैपदहीरप ैीमइण्

22 मई, 2003

अभी पवित्र वाणी सुन रहे थे । राम के कहने से जीव्हा सुच्ची, सुच्ची का मतलब है पवित्र हो जाती है । हम भी अभी राम–राम कह रहे है जरा धैर्य से सिमरण करें कि हमारी जीवहा पवित्र क्यों नहीं होती है, हमारा हृदय पवित्र क्यों नहीं होता, हमारा हृदय पवित्र क्यों नहीं होता । उन महापुरुषों के प्रेरणादायक शब्दों को याद करके, फिर ये ऊँ शान्ति पढ़े । जबान पवित्र हो जानी चाहिए, हृदय पवित्र हो जाना चाहिये ।

आप कृपया मुझे क्षमा करेंगे, प्रभु की कृपा से हमें मनुष्य चोलाप्राप्त हुआ और परमात्मा की कृपा से ही हम मनुष्य चोलाका परित्याग कर अपनी आत्मा को परमात्मा में लय कर सके, इसके लिये हमारे भीतर में गंभीरता नहीं है । महापुरुष कहते हैं 'ऑखां जीवां, बिसरे मर जावां' । यानि आपकी याद जो है, स्मृति जो है वो मेरा जीवन है, आत्मिक जीवन है, विस्मृति जो है वो मृत्यु है, ेमतपवने मृत्यु है । परन्तु हम सब ईश्वर को सारा दिन भूल जाते हैं । इंद्रियों के रसों में फंसे हुये हैं, विशेषकर जबान के । हमारा व्यवहार पवित्र नहीं है, हमारे विचार पवित्र नहीं है, हमारा वाणिज्य पवित्र नहीं है, हमारा भोजन पवित्र नहीं है, हमारा वातावरण पवित्र नहीं है ।

''जेता सागर नीर भरया, ते ते अवगुण हमार।''

सागर में जितना जल है उतने हमारे अवगुण हैं । हम सब पढ़े–लिखे आदमी हैं जानते हैं इन सब बातों को । परन्तु क्षमा करेंगे, हममें गंभीरता नहीं है । अपने जीवन लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए, हमारे भीतर में, दृढ़–संकल्पता नहीं है । एक मनुष्य चोला ही ऐसा है कि जिसमें व्यक्ति अपनी आत्मा का साक्षात्कार कर सकता है, अपनी आत्मा को परमात्मा में विलय कर सकता है, परन्तु लाखों, करोड़ों में से कोई एक–आध व्यक्ति ही सतर्क होता होगा, नहीं तो सब ऐसे, रोज की जिन्दगी चल रही है, चल रही है उसी तरह । किसी के भीतर में गंभीरता नहीं है, होश नहीं है । अपने

प्रति जो लक्ष्य है कि मैंने ईश्वर जैसा बनना है, वो सब भूले हुये हैं । ये सत्संगों में जाना, अच्छा–अच्छा साहित्य पढ़ना, विशेषकर गुरु धारण करना, इसमें सहायक होते हैं । परन्तु ये सब करके भी हम सो रहे हैं । ईश्वर हमारे से दूर नहीं है । हमारे मन ने दूरी स्थापित कर दी है । ईश्वर हमारे भीतर में भी है, बाहर में भी है ।

''अन्दर बाहर एको जानो, ये गुरुज्ञान बताई,
कह नानक, बिन आपा चीने निटे ना भ्रम की खाई ।''

जब तक आप बुद्धि को, अहंकार को, मैं मेरेपन को त्याग नहीं करेंगे, कोई भी साधना सफल नहीं होगी । ये होता है, महापुरुषों के चरणों में रहने से । उनके जीवन का अनुसरण करने से, उनसे आत्म–प्रसाद लेने से । हमारी संस्कृति में, देश की संस्कृति में, गुरु का विशेष महत्व है । बड़े से बड़ा व्यक्ति भी जो इस संसार में हुआ है, उन सबने गुरु धारण किया है । एक गुरु बचपन की विद्या दे, एक गुरु आगे चल के पढ़ाई दे, और आगे चल के गुरु करते हैं, धर्म शिक्षा को समझने के लिए, और आगे बढ़ते चले जाते हैं, तो गुरु की पदवी भी बढ़ती चली जाती है, जिसमें शक्ति होती है, उसके चरण रज पकड़ लेते है, उस गुरु के चरण पकड़ते हैं कि जिनके चरणों को पकड़ के उनकी आत्मा का प्रसाद हमें मिले । ये आत्मप्रसादी तभी प्राप्त होगी जब हमारा अस्तित्व अवगुणों से मुक्त होकर, अति कोमल हो जायेगा । कोमल व्यक्ति ही इस महान उपहार को प्राप्त कर सकता है, कठोर हृदय वाला व्यक्ति, आत्मा उसके भीतर में है, तब भी वो, उससे वंचित रह जाता है । इसके अतिरिक्त सच्चे जिज्ञासु का भोजन शुद्ध, पवित्र और अति कोमल होना चाहिए । जैसा अन्न वैसा मन । जैसा मन होगा वैसी बुद्धि होगी, जैसी बुद्धि होगी वैसी आत्मा होगी । खाने–पीने की तरफ हमारा कोई ध्यान नहीं है । हम जो कमाई करते हैं, उस तरफ हमारा कोई ध्यान नहीं है । चाहे सरकारी नौकर हों, चाहे दुकानदार हों, सब नम्बर दो की कमाई में फॅसें हैं, जैसा अन्न वैसा मन । ऐसी कमाई से परमात्मा मिल जाये, यह असम्भव है ।

इसके लिये कठोर तपस्या की आवश्यकता है । तम रज गुणों को त्यागकर सात्विक गुणों को अपनाना है । गुणों के साथ एक कमसपबंबल, एक कोमलता सी आनी चाहिए । दूसरे के दुख को देखकर हम सहन न कर पायें, दीवाने हो जायें, जब तक कि दूसरे के दुख की निवृति न कर सकें । परन्तु हम दूसरे को दुखी देख सुखी होते हैं, तो ऐसा पत्थर दिल आदमी, इस रास्ते पर चलने का अधिकारी नहीं है, अति–कोमलता चाहिये । सच्चा व्यक्ति आप भूखा रह जायेगा, दूसरे को भूखा नहीं रखेगा । आगे भी एक–आध दफा मैंने वर्णन किया है । एक परिवार घर से निकला है, जीवन की सच्चाई की खोज में, भोजन ले लिया है साथ, भोजन खा रहे हैं, मिया–बीवी हैं, दो बच्चे हैं, एक भिखारी आ जाता है, वो कहता है बहुत भूख लगी है । वो कहते हैं हमारे पास एक दिन का अन्न है, बच्चे छोटे–छोटे भी हैं, हम भी हैं कैसे होगा ? वो कहता है मुझे पता नहीं है । मैं बहुत भूखा हूँ । ईश्वर की कृपा होनी थी, पिता ने अपना भोजन उसके सामने रख दिया । वो खाके कहता है कि मुझे अभी भी भूख लगी है । स्त्री ने अपना भोजन रख दिया, उसने वो भी खा कर कहां कि अभी भी मेरी भूख खत्म नहीं हुई है । मां–बाप कहते हैं, नन्हें–नन्हें बच्चों का खाना है, उन पर रहम करो, करुणा करो । उसने कहा, ये तो मुझे पता नहीं है, मुझे तो अपनी भूख का अनुभव हो रहा है, उसका पता है । ईश्वर की कृपा से मिया–बीवी को प्रेरणा मिली उन्होंने बच्चों का भोजन भी उस व्यक्ति को खिला दिया, वो स्वयं भगवान था । बच्चों को गले लगा लिया, स्त्री–पुरुष को बहुत शुभकामनायें दी । ईश्वर के दर्शन ही नहीं, आप ईश्वर रूप बन जायेंगे । दूसरे के दुख को अपना दुख समझना, इससे कोमलता आती है । जिस हृदय में कोमलता नहीं है, वो व्यक्ति साधना करने का अधिकारी नहीं है । परन्तु देश की स्थिति देखें, चारों ओर नम्बर दो की कमाई हो रही है । चाहे सरकारी नौकर है, चाहे दुकानदार है । और क्या कहूं ? सत्संगों में भी ये हाल, मंदिरों में, गुरुद्वारों में, विशेषकर गुरुद्वारों में इतनी च्वसपजपबे है कि साधारण च्वसपजपबे कुछ मुकाबला नहीं कर सकती है।

परन्तु चल रहा है, बड़े–बड़े ऊँचे व्याख्यान होते हैं, कीर्तन होते हैं, लेक्चर होते हैं, परन्तु समाज में परिवर्तन नहीं आ रहा है । इस तरह अन्य मंदिरों में भी, मस्जिदों में भी, प्रेरणा दी जाती है । लोग बहुत दान आदि करते हैं, मगर वो ही हालत है । सब में स्वार्थ है । बिना योग्य–सेवा किये हुये, मन में करुणा नहीं आयेगी, कोमलता नहीं आयेगी, दीनता नहीं आयेगी । ''बिन गुण कीते भक्ति न होय''। जब तक हम ईश्वर के गुणों को अपनायेगें नहीं, तब तक हमारी साधना में सफलता नहीं आयेगी । ऐसे मनुष्य हैं, अब भी हैं । आप भूखे रह जाते हैं, गरीबों को खाना कराने ले जाते हैं । अपना सब कुछ खत्म कर आते हैं । मगर ऐसे लोग बहुत कम हैं । इश्तिहार–बाजी ज्यादा है, दिखावट ज्यादा है । ये सात्विक कर्म जितने भी हैं, ये जिज्ञासु को छिप कर करने चाहिये, किसी को शोर मचा कर नहीं करने चाहिए । आप किसी की सहायता करते हैं, तो ढिंढोरा मत पीटिये, किसी के नये कपड़े सिलवा देते हैं, शांत रहिये, किसी को पता नहीं लेगेगा। किसी की सहायता कर आते हैं, तो चुप रहिये, घर भी आकर नहीं बताईये। समय लगता है। इस वक्त संसार में विशेषकर हमारे हिन्दुस्तान में, चाहे सरकारी नौकर हों, चाहे व्यापारी हों, व्यवहार पवित्र नहीं है । ''जैसा अन्न वैसा मन''। देश का नाम इतना ऊँचा है परन्तु हम अपने देश का नाम खराब कर रहे हैं, अपने व्यवहार के कारण। हमारा व्यवहार पवित्र नहीं है, सच्चा नहीं है। आज रामनगर, हमारे ऐरिया (।तमं) में एक माता की चेन गले से खींच ली। मोटर–साईकिल पर बैठा था व्यक्ति, भाग गया, पता नहीं लगा । अभी आठ दिन ही हुये हैं, डॉक्टर दीपक जी की धर्म पत्नी की चेन इसी तरह उतार कर, खींच कर ले गये। उसने बहुत बहादुरी की, लड़की ने, पीछे–पीछे भागी, परन्तु बच्चा साथ था । परन्तु एक आदमी का मुकाबला कौन कर सकता है, वो आँखों से ओझल हो गया । आठ दिन में दो वारदातें हुई हैं, बाकी पता नहीं कितनी होती हैं । ये तो अपने घर की बात है । दुनिया की दृष्टि जो है, वो बदल गई है । अन्तर में जो सच्चाई होती थी, और सच्चाई की आवाज सुनता था व्यक्ति, वो खत्म हो

गई, कान बहरे हो गये हैं । न सच्चाई रही है, न सच्चाई की आवाज सुनता है कोई । भारत की संस्कृति सारे संसार में मशहूर है । परन्तु आज ऐसा समय आ गया है कि भारत की संस्कृति सबसे पीछे हो गई है । भाई, भाई का शोषण करता है । क्या कहूं, रिश्तेदार ही आपस में शोषण करते हैं, मित्र अपने मित्र से शोषण करता है । व्यापारी तो करता ही है । उसकी रोटी नहीं चलती जब तक वह ये काम नहीं करता । तो प्रभु के चरणों में जाने के लिये हमें प्रभु बनना ही होगा । परमात्मा के गुणों को अपनाना होगा । ये ही सच्ची तपस्या है, ये ही सच्ची साधना है । प्रत्येक व्यक्ति को राजा हरिश्चन्द्र की तरह बनना होगा । बहुत कठिन है । इसीलिये इसका नाम तपस्या रखा । परन्तु आप सब पढ़े–लिखे व्यक्ति हैं । आप को इस महत्व को समझना चाहिये, कि पैसा चाहिये, कि परमात्मा चाहिये ? ये सोचना चाहिये । एक पिक्चर आई थी, उसका टाइटिल आया था 'हम सब चोर हैं' । वास्तव में उसका टाइटिल सही था, ठीक था । इस वक्त देश में, विदेश में यही हालत है, कि हम सब चोरी करते हैं । साधना में सफलता चाहते हैं । दृढ़–संकल्प की जरूरत है, इसीलिये इसको तप कहा जाता है । अग्नि के आगे बैठ जाना, वो तप नहीं है । पूज्य लाला जी महाराज के पत्र को पढ़ के देखिये, वो तप नहीं है । वो तो भीतर में जितनी मलीनता है उस सब को जला देना है । केवल ईश्वर को और ईश्वर के गुणों को रखना है अन्दर । ये गुण हमारे व्यवहार से, व्यवहार में विकसित हो, हमारी जबान से विकसित हों, हमारे दिल से विकसित हों, हमारी अन्य इंद्रियों से विकसित हों ।

''तू–तू करता, तू भया, मुझे रही न हूँ ।''

''आपा परक़ा मिट गया, जत देखां, तत तू ।''

साधना यही है । तू–तू करके परमात्मा का नाम लेते हैं । परमात्मा जैसा ही बनना है । कपड़े पहने हुये, दफ्तर जाते हुये, राम–राम कह लिया, इससे कुछ नहीं होगा । बड़ी गंभीरता की आवश्यकता है, मनन करने की

आवश्यकता है, परम् संतों के चरणों की रज लेने की आवश्यकता है, उनके जीवन का अनुसरण करने की आवश्यकता है, चाहे वो शरीर छोड़ चुके हैं, या शरीर उनका है । संक्षिप्त में फिर करबद्ध होकर आपसे प्रार्थना करता हूँ कि इस रास्तें पर चलने, सफलता प्राप्त करने के लिये, गंभीर बनिये, अति गंभीर बनिये, अति गंभीर बनिये । हर वक्त ये ना सोचते रहिये, लाभ ही होता रहे, लाभ ही होता रहे । कभी हानि भी हो जाये तो चिन्ता मत करिये । ''दुख दारू–सुख रोग भया'' । दुख जो है, वो औषधि का काम करता है और सुख जो है वो बीमारी का काम करता है । सच्चा तपस्वी दुख मांगता है, और सच्चा तपस्वी दूसरों के दुखों को ग्रहण कर लेता है । प्रभु आप सब पर कृपा करें ।

त्रत्रत्रत्रत्रत्रत्रत्रत्रत्रत्रत्रत्रत्रत्रत्र

PARAMSANT SADGURU DR. KARTAR SINGHJI SAHEB

पूज्य गुरु देव जी के प्रवचन –, 21 नवम्बर, 2006

आप सब भग्यवान हैं, सभी महापुरुष कहते हैं कि मनुष्य चोला बड़ी खुशकिस्मती से मिलता है, इस शरीर में रहते हुए यदि हमने अपने जीवन का लक्ष्य प्राप्त नहीं किया तो हमने समय व्यर्थ खोया है । सभी महापुरुषों ने चेतावनी दी है, परन्तु दुख की बात है कि मनुष्य, जागरूक नहीं होता है । अपने जीवन लक्ष्य के प्रति जागरूक नहीं होता है । प्रत्येक व्यक्ति को देखो वो दुखी है । 'नानक दुखिया सब संसार, सो सुखिया, तिस नाम आधार' । सभी दुखी हैं, परन्तु वो व्यक्ति आत्मिक सुख प्राप्त करता है, जिसने ईश्वर के नाम को अपना लक्ष्य बनाया है और उस नाम द्वारा परमपिता परमात्मा के साथ तद्रूपता स्थापित की है । उस तद्रूपता में कितना आनन्द है । ''आनन्द भया मेरी मांए, सत् गुरु मैं पाया ।'' सब भूले हैं, भूल रहे हैं, भटक रहे हैं, हमारे में गंभीरता रही नहीं । राग द्वेष में फंसे हुये हैं । इन सब बुराइयों से मुक्त हों, केवल एक ही लक्ष्य रखें कि अपने–आप को ब्रह्मज्ञानी बनायें । अर्थात ईश्वर का ज्ञान आप को हो जाये । आपके रोम–रोम में ईश्वर, पहले है ही, परन्तु हम सोये हुये हैं, अपने लक्ष्य के प्रति । उस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये सब कुछ बलिदान करना है । शरीर, प्राण, बुद्धि, मन, आनन्द से आत्मा को मुक्त करा कर अपने मानसिक सरोवर परमपिता परमात्मा के चरण रज बन जाओ, वैसे ही बन जाओ।

''तू–तू करता, तू भया, मुझे रही न हूँ ।''

''आपा परक़ा मिट गया, जत देखां, तत तू ।''

आपका जीवन लक्ष्य है । आपको ये मनुष्य चोला मिला है । इसी चोलामें ही व्यक्ति ईश्वर की प्राप्ति कर सकता है । मनुष्य ईश्वर जैसा बन सकता है । परन्तु हम सब भूले हुए हैं । राग–द्वेष में फंसे हुए हैं । किसी को बुरा, किसी का भला, इसी में सारा समय बर्बाद कर देते हैं । मेरी करबद्ध प्रार्थना है

आपसे, आप अपने जीवन लक्ष्य को पहचानें, और उसके लिये यथा–योग्य पुरुषार्थ करें ताकि आप में और परमात्मा में कोई अन्तर न रहे ।

''तू–तू करता, तू भया, मुझे रही न हूँ ।''

''आपा परक़ा मिट गया, जत देखां, तत तू ।''

अन्दर–बाहर वो–ही–वो रह जायेगा । आपका व्यवहार है, आनन्द, प्राण, शरीर, मन, बुद्धि के साथ वो खत्म हो जाएगा । ये स्थिति लाखों–करोड़ों में से एक व्यक्ति की प्राप्त हो होती है । परन्तु लक्ष्य ये प्रत्येक व्यक्ति का है, खासकर जो पढ़े–लिखे व्यक्ति हैं उन्हें सोचना चाहिए कि हमारे जीवन का क्या लक्ष्य है?

''तू–तू करता, तू भया, मुझे रही न हूँ ।''

'आपा परक़ा मिट गया, जत देखां, तत तू ।''

ईश्वर सर्वव्यापक है, ये सब कहते हैं । परन्तु उसको पहचानते नही हैं । न भीतर में, न बाहर में । हमारा कर्म है, ''तू–तू करता, तू भया'' । हे ईश्वर, तेरा सेवक, ''तू–तू करता, तू भया । मुझ में रही न हूँ'' । ''आपा परका मिट गया, जत देखां, तत तू ।'' सिवाये परमात्मा के अन्य कुछ नहीं है । जो कुछ दिखता है वो अज्ञानवश दिखता है । तो आप सबका जीवन लक्ष्य है कि इसी शरीर के रहते प्रयास करें कि आप परमात्मा जैसे बन जायें । महापुरुषों ने प्रेरणा भी दी है, कि ऐ जीव, तू तो परमात्मा जैसा है ही । 'तत्वमसि', कहां तू, अज्ञान में भूला हुआ है । इस अज्ञान रूपी अंधेरे से अपने–आप को मुक्त करा और सच्चे प्रकाश का, आत्मा का, परमात्मा का, भान कर, शांत रह । महापुरुष कहता है, ऐ जीव तू तो वो ही, जो परमात्मा है वास्तव में तू परमात्मा है । भूला हुआ है कि तू ये शरीर, इस शरीर से अपना मोह हटा, पाँच प्रकार के ये शरीर हैं, और अपना शरीर, तन, मन, बुद्धि, अहंकार इन सब से अपने मन को हटा और आत्मा को परमात्मा में विलय कर दें । अपने आप को खत्म कर दे। 'जब लग मैं था, हरी नांह' । जब तक आपके भीतर में, 'मैं', 'अहंकार' रहेगा तब तक आप ईश्वर से दूर रहेंगे । ''अब हरी, मैं नांह।''

अब साधना करते हुए ईश्वर की कृपा से सफलता मिली, केवल ईश्वर का ही भान है । मैं और मेरा पन, तू और तेरा पन, ये सब खत्म हुआ है । ये बहुत कठिन है परन्तु प्रत्येक मनुष्य का जीवन लक्ष्य यही है । अगर हमने इस जीवन में इस लक्ष्य को प्राप्त नहीं किया तो जीवन व्यर्थ जाएगा पता नहीं दूसरा जीवन कैसे मिलेगा । मनुष्य चोलामें ही इस लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं । समय कम है, इसलिए मैं आपसे क्षमा चाहता हूँ, केवल प्रार्थना करना ईश्वर से कि हे प्रभु अपने बच्चों को सच्चा ज्ञान प्रदान करें, वो अपने लक्ष्य को, कि ''मैं और परमात्मा एक हैं'', प्राप्त करने का जो प्रयास है, साधन है, उनमें उनको सफलता मिल जाए और वो आप के चरणों में हमेशा–हमेशा रह जायें । मगर खेद की बात है कि, ये ऊँचा दूसरा लक्ष्य केवल मनुष्य ही प्राप्त कर सकता है, चौरासी लाख योनियां हैं, सब किसी को ये लक्ष्य नहीं प्राप्त है, केवल परमात्मा ने मनुष्य को ही ये लक्ष्य दिया है कि केवल वो यथायोग्य परिश्रम करके अपने अहंकार का त्याग करके, दीनता को अपनाकर ईश्वर में ऐसा विलय हो जाए 'ज्यों जल में जल आये खटाना, त्यों ज्योती संग जोत समाना मिट गया गमन पाये विसराम'', हमेशा–हमेशा के लिए आप, अज्ञानता से मुक्त हो जाएं । हमेशा–हमेशा के लिए आप परमात्मा बन जायें ।

''तू–तू करता, तू भया, मुझे रही न हूँ ।''

''आपा परक़ा मिट गया, जत देखां, तत तू ।''

हम किसी में मित्रता, मित्र देखते हैं, मित्रता का भाव रखते हैं । किसी के प्रति दुश्मनी का भाव रखते हैं । हमारा लक्ष्य है 'सब में रव रहा प्रभु एको' । हे परमात्मा एक ही पिता है सबका, वो सब में रम रहा है । और हमारा लक्ष्य, हमारा कर्म है, हमारा अभ्यास है, कि हम इस अभ्यास को करें और सफल हो जाएं । और ईश्वर से तद्रूप हो जाएं । मैं और मेरा पन खत्म हो जाए । ''जब लग मैं था, हरी नांह, अब हरी है मैं नांह, प्रेम गली अति संकरी, जामें दो न समांहि ।''

गम्भीरता से इस विषय को सुनते रहिए । केवल राम–राम कहने में अपना समय गवाएं नहीं । परन्तु राम नाम कहने के साथ–साथ वास्तविकता जो है उसको पहचानें कि आप कौन हैं । आपके मुखारविंद से ये निकलेगा ''अहं ब्रह्मास्मि'' । केवल कहने मात्र के लिये नहीं है, रूप, स्वरूप ही, परमात्मा का स्वरूप ही है, उस रूप का आपको अनुभव होने लगेगा और ये बातें कोई ऊंचे–ऊंचे स्वर से नहीं कहनी होगीं, वो अपने–आप हमारे व्यवहार में उतरेंगी । जैसा परमात्मा व्यवहार करता है, वैसा आप परमात्मा बन कर, आप परमात्मा जैसा व्यवहार करेंगे । किसी में कोई दोष नहीं देखेंगे, किसी को अपना शत्रु नहीं देखेंगे ।

''सब में रव रहा प्रभु एको, पेख–पेख नानक बिगसाई''

सब में परमात्मा बस रहा है, चाहे मैं हूँ, चाहे कोई और है । उस परमात्मा के दर्शन करके, गुरु नानक साहब कहते हैं कि हे मनुष्य वो उस आनन्द में तदरूप हो जाते हैं, शब्द नहीं हैं वर्णन करने के लिए, मन चुप हो जाता है, मौन हो जाता है । भगवान शिव की समाधि दृढ़ हो जाती है । ठीक है कुछ समय उनको इस समाधि से परे हटना पड़ा, परन्तु वास्तव में शिव भगवान की जो समाधि है, जो सर्वश्रेष्ठ है । हम सब अज्ञानवश, माया के अंधेरे में फंसे हुए है । इसका एक ही रास्ता है कि एक ऐसा प्रेमी भक्त गुरु ढूंढिये जो परमात्मा जैसा हो । आप उसके चरण रज लेकर आप भी वैसे ही बन जायें ।

''तू–तू करता, तू भया, मुझे रही न हूँ ।''

''आपा परक़ा मिट गया, जत देखां, तत तू ।''

श्श्अन्दर बाहर एको जानो । ये गुरूज्ञान बताईए कह नानकए बिन आपा चीने मिटे ना भ्रम की खाई ।श्श

जब तक आप अपने अज्ञान रूपी अहंकार का परित्याग नहीं करेंगे तब तक अपने सच्चे स्वरूप को और तथा संसार को ईश्वर रूप नहीं देख सकेगें ।

बड़ा कठिन है । परन्तु ईश्वर कृपा हो जाये । लाखों–करोड़ों में किसी एक व्यक्ति पर ही ये कृपा की वृष्टि होती है ।

''तू–तू करता, तू भया, मुझे रही न हूँ ।''

''आपा परक़ा मिट गया, जत देखां, तत तू ।''

मेरे में भी तू ही है । मेरे दुश्मन में भी तू है । प्रभु आप सब पर कृपा करें, क्षमा करें । समय कम है फिर कभी हाजिर होकर आपकी सेवा करूंगा ।

अंदर–बाहर सिवाय शान्ति के आत्मिक ज्ञान के, कुछ नहीं हो। प्रभु आप सब पर कृपा करें । मेरी शुभकामना है । ऊँ ।

त्रत्रत्रत्रत्रत्रत्रत्रत्रत्रत्रत्र

PARAMSANT SADGURU DR. KARTAR SINGHJI SAHEB.

पूज्य गुरुदेव जी के प्रवचन, नई दिल्ली, दिनांक 05.05.1996

सत्संग में आकर सदगुण उत्पन्न होने चाहिए । सत्संग में आकर या घर में बैठे हुए आराधना, साधना की, किन्तु ईश्वरीय दिव्य–गुण उत्पन्न नहीं हुऐ, क्षमा करेंगे, साधना का विशेष लाभ नहीं होगा । पूज्य गुरु महाराज फरमा रहे हैं, जिन पर ईश्वर की कृपा हो जाती है, अपने बल–बूते कुछ नहीं होता है, सेवा पैदा हो जाती है । नदी का जल बहता रहता है। धरती को पानी देता, धरती पानी को लेती है, उसमें खेती होती है, खेती उपजति है, संसार को लाभ पहुंचता है । नदी कुछ नहीं मांगती धरती से, वो जल दिए जा रही, दिए जा रही है । गंगा का जल बहता है, बह रहा है । लोग आते हैं, स्नान करते हैं, पवित्र होते हैं । अमृत जल लेते हैं, और घर भी लौटते हैं तो गंगा जल लेकर आते हैं । ऐसा गुण साधक में होना चाहिए, कि वो अपना शरीर, अपना मन, अपना धन, अपना सब कुछ, संसार की सेवा में, अप्रयास, बिना प्रयास के लगाता रहे । अर्थात संसार को बिना किसी आशा के सब सुख पहुंचाता रहे । ये उसका सहज–स्वभाव हो जाए, नदी की तरह, तब उसे समझना चाहिए कि वो सच्चा जिज्ञासु है। उसको नींद न आए, जब तक वो दूसरों को, वो सुख न पहुंचा सके । उसकी सहज–स्थिति होती है । दूसरा गुण पूज्य गुरु महाराज ने बताया है, सूर्य की तरह । गुरुवाणी में भी आता है, 'ब्रह्मज्ञानी ते कछु बुरा न भया' । उससे किसी का बुरा नहीं होता अपितु उससे दूसरे का भला ही भला होता है, भला ही भला होता है । हम सोचते रहते हैं कि फलाना व्यक्ति अच्छा है, फलाना व्यक्ति बुरा है । सच्चा जिज्ञासु जो है उसके हृदय में उसके मस्तिष्क में ये बात आती ही नहीं उसको सभी ही परमात्मा स्वरूप दिखते हैं और परमात्मा स्वरूप देख कर वो सब की सेवा करता है ।

दूसरा गुण है, सूर्य की तरह उदारता है । सूरज सबको दर्शन देता है, सब पर अपना प्रकाश डालता है, सब पर अपनी रोशनी प्रदान कर रहा है, सब पर गरिमा डाल रहा है, परन्तु कुछ नहीं मांग रहा है, कोई पापी है तब, कोई पलीत है तब । सब पर एक जैसी गरिमा बांट रहा है, देता रहता है, देता रहता है, देता ही रहता है । गंगा नदी भी ऐसे ही बहती है । सूर्य भगवान भी ऐसे ही प्रकाश देते हैं, ऐसी ही गरिष्मा प्रदान करते रहते हैं । सूर्य की गरिष्मा न हो तो संसार का विनाश हो जाए । संसार कायम है, वो सूर्य के कारण है । इसी तरह सच्चे जिज्ञासु में भी उदारता होनी चाहिए । बिना प्रयास के उसका सहज स्वभाव होना चाहिए । कोई उससे दुश्मनी करता है, वो उसके पांव पकड़ता है, वो उसको सुख पहुंचाता है । शेख फ़रीद जी कहते है जो तुम्हें गाली देते हैं, तुम उसके घर जाओ, उसके घर जाकर उसके पांव दबाओ । ये साधना केवल ऑख बंद करना नहीं है, ऑख बंद करना तो पहली कक्षा है । हम लोग काफी आगे बढ़ चुके हैं । सोचना चाहिए, स्वनिरीक्षण करना चाहिए कि हममें क्या परिवर्तन आया है अब तक ? क्या हमारा स्वभाव नदी की तरह हो गया है? क्या हम जीव, दानी सूर्य भगवान से, वैसे हम बन गए ? मंजिल बहुत दूर है । अभी कुछ भी नहीं हुआ । भाई लोग कहते हैं, मेरा मन नहीं लगता, मेरा मन नहीं लगता, मन नहीं लगता । सच कहते हैं वो, झूठ नहीं कहते हैं । परन्तु हमने अभी तक ईश्वर के गुणों को अपनाया नहीं है । पूज्य गुरुदेव बेशक जिज्ञासु के गुणों का वर्णन कर रहे हैं, वास्तव में ये परमात्मा के ही गुण हैं, और परमात्मा की ही कृपा से, सच्चे जिज्ञासु में वो गुण, जब तक नहीं आते, तब तक वो अधिकारी नहीं बनता है । ''ब्रह्मज्ञानी पर–उपकार'' वो उसके भीतर में उमंग होती कि किस तरह दूसरे का भला करे। उसका सहज–स्वभाव होता है । वो बन कर नहीं करता ऐसा । वो उसकी वृत्ति है । जैसे नदी की वृत्ति है बहना, बहना और दूसरे को सुख पहुंचाना । सूर्य की वृत्ति है, गरिष्मा देना, वो अपने–आप, जान–बूझ कर नहीं करता है । इसी तरह सहज–स्थिति जिज्ञासु

की बन जाए । तो पहला गुण बताया है नदी का । दूसरा बताया है सूर्य का । तीसरा बताया है धरती का । जिज्ञासु में सहन–शीलता होनी चाहिए, धरती समान । ब्रह्मज्ञानी के प्रति लिखा है कि ब्रह्मज्ञानी का भी ऐसा स्वभाव होता है जैसे धरती का । बड़ी सहन–शीलता है । हम किस प्रकार के जूते पहन कर चलते है; धरती कुछ नहीं कहती, हम गंदगी डालते हैं; धरती रोती नहीं, पॉव डालते हैं; धरती रोती नहीं । ये धरती का जो स्वभाव है, महान, ऊॅचे से ऊॅचे ज्ञानियों का स्वभाव है । ''ब्रह्मज्ञानी का एक नाम, जो धरती का सहज–स्वभाव'' । धरती और अग्नि का सहज–स्वभाव है । बड़ा कठिन है । हमें कोई जरा सी बात कह देता है तो आग लग जाती है । तो ये साधना नहीं है । हमें ये अभ्यास करना होगा, कोई हमारे पर पत्थर फेंकता है, हमें गाली देता है, लड़ाई करता है, हमारे में सहन–शीलता होनी चाहिए । हमारे देश में स्त्री को और धरती को, इन दोनों की पूजा की जाती है क्योंकि दोनों में यही गुण है, सहन–शीलता है । पुरुषों में सहन–शीलता बहुत कम है । वर्तमान में, बहनें क्षमा करेंगी, वो अपने गुणों को भूलती चली जा रही हैं और नयी, पश्चिम की जो संस्कृति आ रही है, उससे प्रभावित होती जा रही हैं । हमारा जो रूप था ईश्वरीय–रूप था । हमें माता कहा जाता था । गुणों के कारण, मॉ रूप करके हमारी पूजा होती थी । और वो मॉ आज कहती है, मेरा भी समाज में कोई स्थान है । अपने महान गुण को छोड़कर, छोटी सी संकीर्णता 'नैरो माईंडेडनेस' (छंततवू.उपदकमकदमे) की ओर बढ़ रही है बहनें । बुरा मत मनायें । यहां प्रत्येक स्त्री मॉ रूप थी पूजा होती थी, मंदिरों में, गुरुद्वारों में, सब जगह, घर में तो होती थी । उनका दोष नहीं है, ये सभ्यता का प्रभाव इतने जोर से, इतने वेग से आ रहा है कि हम अपने गुणों को जो ईश्वरीय गुण हैं, ईश्वर की समीपता है हमारे में, हम उसको कूड़े–करकट में फेंक रहे हैं । तो सच्चे जिज्ञासु के भीतर में, पूज्य गुरुदेव कह रहे हैं कि तीन गुण होने चाहिए; नदी की तरह दूसरे की सेवा करें, सूर्य की तरह दूसरों को लाभ पहुंचायें, उनको जीवन दान देना, धरती की तरह सहनशीलता,

सहनशीलता, सहनशीलता । बिना गुणों के भक्ति नहीं होती । भक्ति के अर्थ हैं, चाहे ज्ञान की साधना करें, चाहे प्रेम की साधना करें, बिना गुणों के कोई भी, किसी प्रकार की भी साधना सफल नहीं हो सकती । यहां भक्ति के अर्थ हैं, साधना । ''बिन गुण भक्ति न होय ।'' इतने ऊँचे गुण होने चाहिए तब हम अधिकारी बनते हैं । आज सुबह किताब खोली, मेरी ऑख चौंधयाने लगीं कि ये क्या लिखा है ? अपने आपको स्वनिरीक्षण करके देखा, ये तो बिल्कुल कोरा है, कोरा ही कोरा । कहॉ गुण है वो धरती जैसा, कौन गुण है नदी जैसा, कौन गुण है सूर्य जैसा । भगवान कृष्ण भी गीता में सूर्य का ही उदाहरण देते हैं, अर्जुन को । तू कर्म कर जैसे सूर्य भगवान कर्म करते हैं, मैं भी कर्म करता हूँ, मुझे भी कर्म का फल नहीं लगता है । सूर्य भगवान भी इतनी सेवा करते हैं, इतने कर्म करते हैं, उनको भी कर्म का फल नहीं लगता है । तू भी कर्म कर, परन्तु कर्म के फल की आशा मत रख । आशा कर्म के फल का प्रभाव तुम्हारे ऊपर नहीं पड़ना चाहिए । बुरा हो चाहे भला हो । ये जीवन की एक साधना है । हम जो भी कर्म करते हैं आशा रख के करते हैं। । किसी ने अच्छी बात कही, प्रसन्न हो जाते हैं, किसी ने गलत बात कह दी, अयोग्य बात कह दी, तुरन्त गुस्सा आ जाता है । ये तो साधना नहीं है । अभी हमारी मंजिल बहुत दूर है । घबराये नहीं, चलते जाइये, चलते जाइये । परन्तु आदर्श हम सबको यही रखने होंगे, ये स्थिति जब ईश्वर के पास से आ जाती है तब परमात्मा का मिलन, सच्चे पति के मिलन, सच्ची मॉ के दर्शन तुरन्त हो जाते हैं । अब भी चित्त में बड़ी मलीनता है, बड़ी मलीनता है । कठोरता है, बड़ी कठोरता है । मुलायमियत नहीं है, दृढ़ता नहीं है । लोग–बाग समझते हैं ऑखे बंद कर ली यही काफी है, नहीं । मैं ये बार–बार कहता हूँ सत गुणों को अपनाएं । जब तक सतगुणों को नहीं अपनायेंगे, सत्गति नहीं आएगी, मन में कोमलता नहीं आएगी । कोमल मन स्थिर हो सकता है, स्थूल मन स्थिर नहीं होता है । ये कोमल होकर ही आत्मदेश में प्रवेश पा सकता है उससे पहले नहीं । ये अधिकारी तब ही हो सकता है, जब

तक इसमें कोमलता नहीं आती है, पुष्प की तरह इसको खिलना चाहिए, अप्रयास सबको ही सुगन्धि प्रदान करनी चाहिए, जिव्हा में, वाणी में कठोरता नहीं आनी चाहिए, कठोरता तो होनी नहीं चाहिए, व्यवहार में जैसे पूज्य गुरु महाराज ने फरमाया है, नदी की तरह दीनता, सबकी सेवा करना, सूर्य की तरह सबको गरिष्मा, सबको जीवन प्रदान करना और संसार में रहकर दुख–सुख, दूसरों की बातें, सबको सहन करना । आज तीन बातों पर ही मनन करें घर जाके और आगे के लिए प्रयास करें । मुझे आशा है, विश्वास है कि आप लोग भूलेंगे नहीं इन तीन बातों में, इनमें परिपक्वता आएगी, देर लगेगी, चिन्ता मत करिये, कोई आपसे बुरा–भला नहीं कहेगा, परन्तु अभ्यास आज से ही शुरु कर दीजिए । मैं पिछले महीनों से, कई महीनों से बार–बार कहता आ रहा हूँ कि परिवार में एक–दूसरे से संयोग होना चाहिए जो व्यक्ति परिवार में सफल हो जाता है वो संसार में भी सफल हो जाता है और परमात्मा के पद पर भी सफल हो जाता है । ये पूज्य गुरु महाराज ने जो लिखे हैं तीन गुण, ये प्रेमी भाईयों के लिए, परिवारिक जीवन जो व्यतीत करते हैं, विशेषकर उनके लिए लिखे हैं । मुझे आशा है कि आप इन गुणों को अपना कर मुझे अपना आभारी बनाएंगे । गुरुदेव आप सबका भला करें । एक मिनट, शोभा बहिन, वो पढ़िये वैष्णव जन ।

ढ ''वैष्णव जन तो, तेने कहिए जे, पीड़ पराई जाने रे । .....''

ये भजन, महात्मा गांधी जी को अति प्रिय था । उनके आश्रम में रोज सुबह गाया जाता था । इसी भजन का भाव ही उनके जीवन में उतरा हुआ था और वे इस भजन के भाव के प्रतीक थे । भले ही उन्होने सन्यास नहीं लिया परन्तु उनको महात्मा गांधी कहा करते थे । वास्तव में वो महात्मा थे । हमें भी कोशिश करनी चाहिए कि गुणों को अपनायें, गुणों को अपनायें । ये जो भी आपको अच्छा ग्रन्थ लगे, गीता है, रामायण है, गुरु ग्रंथ साहब हैं, और

पुस्तकें हैं, शास्त्र हैं, उपनिष्द हैं, जो भी अच्छा लगे पढ़े, मनन करें और जीवन बनाने की कोशिश करें उनके अनुसार । केवल ऑख बन्द करने से कुछ नहीं होगा, पत्थर की मूर्ति बन जाएंगे, इस शरीर में जब तक गुण नही आयेंगे तब तक हमारा उद्धार नहीं होगा । रोज सोचना चाहिए, क्या बात है, मेरे में क्यों नहीं ऐसे गुण आते । सारे गुण जो इस भजन में गाये गये महात्मा गांधी जी में सहज रूप में थे, सहज रूप में । प्रत्येक सत्संगी भाई को ऐसा बनना है ।

'हमारे यहां ज्ञान मार्ग और भक्ति मार्ग दोनों को साथ–साथ लेकर चलते हैं जहां तक लक्ष्य का संबंध है हमारे यहां केवल एक ईश्वर को मानते हैं, जो सर्वभूतों को आधार है । जो अनन्त है, अनादि है, और जो वर्णन में नहीं आ सकता ।''

भाईयों को मन में गलत–फहमी नहीं रखनी चाहिए । आदि–काल से ईश्वर की प्राप्ति के कई साधन हैं, कई साधन रहे हैं और इन साधनों के कारण सम्प्रदाय बन गये और आपस में शास्त्रार्थ होता है, तर्क–वितर्क होता है, कि क्या भक्ति उत्तम है या ज्ञान उत्तम है ? हमारे देश में शास्त्रार्थ एक बहुत बड़ी संस्था थी । कुछ पिछले पन्द्रह–बीस साल से देख रहा हूँ कि शास्त्रार्थ नहीं होते हैं । नहीं तो इस काल में होता था परन्तु ये सब शास्त्रार्थ आदि जो भी हैं ये संकीर्णता है, ये हृदय की विशालता नहीं है । प्रत्येक मनुष्य का अपना धर्म है । करोड़ों व्यक्ति हैं तो करोड़ो व्यक्तियों के करोड़ो धर्म हैं । मुख्यतः भक्ति का मार्ग है, ज्ञान का मार्ग है । तो संत मत में दोनों को लिया जाता है किसी प्रकार का तनाव नहीं है, झगड़ा नहीं है । जैसे–जैसे किसी व्यक्ति की वृत्ति होती है महापुरुष उस जिज्ञासु की वृत्ति के अनुसार उसको साधना बतला देते हैं । आसाम में गुरु नानक देव गये हैं और वहां दो मित्र गुरुदेव की सेवा में आए हैं, बातचीत हुई है । एक को ज्ञान का उपदेश दिया है दूसरे को भक्ति का उपदेश दिया है । तब वो दोनों चले गए । तो 'मर्दाना' जो उनके मुसलमान मित्र थे गुरुदेव से पूछने लगे कि क्या बात है,

किसी को कोई मार्ग बता देते हैं, किसी को कोई मार्ग बता देते हैं, एक ही मार्ग क्यों नहीं बताते हैं ? तो गुरुदेव ने समझाया जिसको भक्ति का साधन बताया है उसके अतीत के संस्कार भक्ति की ओर हैं, और दूसरे को ज्ञान का साधन बताया है, उसे संस्कार बुद्धि के संस्कार हैं इसलिए पृथक–पृथक साधना बताई है । वास्तव में भेद कुछ नहीं है, आगे चल कर दोनों एक हो जाते हैं, मन और बुद्धि । मन भक्ति से रीझता है। बुद्धि की बुद्धि की बातों से रीझती है । ये दोनों बातें प्रत्येक मनुष्य में होती है । किसी में मन प्रधान है, किसी में बुद्धि प्रधान है । तो अकारण तर्क–वितर्क नहीं करना चाहिए । लक्ष्य हमारा ये है कि किसी प्रकार जिज्ञासु को अपनी आत्मा का या परमात्मा का अनुभव हो जाए तथा वो उसी प्रकार बन जाए । कबीर साहब समझाते हैं भक्त कोः

'तू–तू करता, तू भया । मुझ में रही न हूँ ।
आपा परका मिट गया, जत देखां, तत तू ।''

भक्ति में तू–तू, तू–तू करते हैं । ये समझते हैं, कुछ नहीं अपना शरीर भी, अपना तन भी, अपना मन भी, अपना धन, अपनी बुद्धि भी, सब अपने प्रीतम में चरणों में अर्पण कर देते हैं । और ज्ञानी, ''एक कहूं तो है नहीं, दो कहूं तो झूठ, तीन कहूं तो बार, तू जैसा है वैसा रहे। कहत कबीर विचार'' । ये दोनों विचार कबीर साहब के हैं । ज्ञानी कहता है कि आत्मा और परमात्मा एक है । कबीर साहब कहते हैं ये भी गलत है कि ज्ञान की शिखरता पर पहुंच कर, कहते हैं कि, कौन कहेगा कि एक हैं या दो हैं । कहे बिना रहते नहीं है जिसके प्रति कहा जाता है उसका कोई अन्त नहीं है । एक शब्द भी अपेक्षित हो जाता है, एक, दो, तीन अपेक्षित हो जाता है उसका भी कोई अस्तित्व होता है । परमपिता परमात्मा तो बेअंत हैं । अथाह है, सागर का भी तो अंत होता है, परन्तु परमात्मा का तो कोई अंत है ही नहीं वो तो बेअंत है । गुरु नानक इस 'अन्त' के शब्द को लेकर आप में सफल रहे हैं । क्या गुण गांऊ, क्या कुछ कहूं ? अपने–आप को खो दिया, अपनत्व खो दिया । ''एक कहूं

तो है नहीं, दो कहूं तो झूठ ।'' ज्ञानी दो की बात को नहीं मानता है । ये तो झूठ है, माया है, अज्ञान है । पर जब बहुत ही कह दूं । तीन कह दूं, चार कह दूं, पांच कह दूं, सभी कह दूं, तो वो कहते हैं कि ऐसा नहीं है, तो ये विषय बड़ा, एक गूढ़ विषय है । जैसे आईज़क न्यूटन एक बड़े विज्ञानी थे, साईटिस्ट (बपमदजपेज) थे, कहते थे मैं सागर के तट पर खड़ा हूँ और कंकर चुन रहा हूँ । एक संसार की विद्या के लिए एक महान पुरुष ऐसा कहता है । और परमात्मा के लिए हम कह दें कि हमने जान लिया है । पूर्ण रूपेण से जान लिया है । गुरु महाराज कहा करते थे, ''हनो दिल्ली दूरस्त'' । दिल्ली जो है, हमारी जो यात्रा है, हमारा जो अन्त है, मेन (उंपद) लक्ष्य है, ये बहुत दूर है, बहुत दूर है, बहुत दूर है । पूर्ण रूप से उसे किसी ने नहीं देखा है । तदपि मनुष्य चोला मिला है, इसी शरीर में, इसी मनुष्य चोले में मनुष्य प्रभु की समीपता प्राप्त कर सकता है । परमात्मा के लक्ष्य को, परमात्मा के स्वरूप को कुछ–कुछ जान सकता है । अपने–आप को समझ सकता है, परमात्मा हमारे भीतर में भी है, आत्मा के रूप में है । उस आत्मा की जानकारी कुछ–कुछ कर सकता है परन्तु पूर्णतः, पूर्ण रूपेण से जानकारी कर लेना बहुत कठिन है, बहुत कठिन है, बहुत कठिन है । कहना तो नहीं चाहिए, देवी–देवता भी पूर्ण रूप से नहीं कह पाए, किसी महापुरुष की वाणी में कहीं नहीं आया है । भक्त जो है वो चकित हो जाता है कि क्या लीला है भगवान की भक्त आगे बढ़ता है तो विस्माद में आ जाता है, हैरान हो जाता है । भगवान की लीला को देखकर विस्माद में आता है, कि कितना संसार है कि एक हमारा भारत देश नहीं, एशिया है, यूरोप है, अमेरिका है । ये तो एक मण्डल है, एक मण्डल नहीं, हजारों मण्डल हैं । अब तो विज्ञान भी कह रहा है कि एक धरती नहीं, हजारों धरती हैं । हम अपने परिवार का प्रबन्ध करने में असमर्थ होते हैं तो महापुरुष कहते हैं कि आप इतने मण्डलों का प्रबन्ध कैसे करते हैं । ये भी एक भक्ति का साधन है विस्माद । पूज्य गुरुदेव पुस्तक पढ़ा करते थे सुदर्शन । 40 कहानियां हैं । 40 तरीके से उस

महापुरुष ने परमपिता परमात्मा की समीपता प्राप्त करने के रास्ते बताए थे । आखिर में चालीसवीं कहानी में विस्माद की बताई थी । संतों ने विस्माद पर विशेष महत्व दिया है, कि तेरा रूप कैसा है । कोई कहता है, सांवला है, कोई कहता हैं भगवान राम जैसा बड़ा ही सुन्दर है, भगवान विष्णु जैसा बड़ा ही सुन्दर है, कोई कहता है, भगवान शिव है, वो जो मिट्टी लगाई हुई है । कोई कहता है उसका रूप ही कुछ नही है, तो आखिर तू है ही क्या ? एक नाद नहीं है, हजारों नाद हैं । हजारों आवाजें हो रही हैं, लाखों आवाजें हो रही हैं । विस्माद ही विस्माद हैं । स्वर हैं, कहते हैं ज्ञान सीमित है चार वेदों में । ये चार वेद क्या, हजारों शास्त्र लिखे गए हैं । और वेदों को भी भगवान कृष्ण ने अर्जुन को समझाते हुए कहा है, वहां तो विशेषकर कर्म–काण्ड पर ही बल दिया है । वहां अंतिम लक्ष्य की प्राप्ति नहीं होती है । दूसरे अध्याय में बड़े विस्तार से कहा है । तो हमारे वेद ही अंत में माने जाते हैं । परन्तु भगवान भी कहते हैं कि नहीं, ये भी अंत नहीं है तो अंत है क्या ? किसी ने भगवान को दूध पिला दिया, खाना खिला दिया तो नामदेव जी ने दूध पिलाया । जाट ने, धन्ना जाट ने भगवान कृष्ण को खाना खिलाया । कितनी सरलता है, पण्डित बड़े ईर्ष्यालु हो गये कि इसने पत्थर पूज के भगवान के दर्शन किए और खाना खिलाया । वो पत्थर चुरा ले आए । उस पत्थर की पूजा करने लगे । बड़ी पूजा की, बड़ी पूजा की, परन्तु भगवान ने दर्शन नहीं दिए । इसमें अन्तर क्या था? धन्ना जाट सरल था, नामदेव बचपन में सरल थे । सरलता एक गुण है, महान गुण है । बुद्धि इस रास्ते पर रुकावट डालती है । धन्ना कहता है कि मै तो रोटी नहीं खाऊँगा जब तक भगवान आप नहीं खाओगें, मैं नहीं खाऊँगा । नामदेव डंडा लेकर आते हैं, भगवान दूध नहीं पीते तो मैं डंडा मारुंगा । आप कहेंगे कि ये भी भक्ति है ? हां 'एवरीथिंग इज फेयर इन लव एंड वार' (म्अमतलजीपदह पे पित पद सवअम – ूत) । इस भक्ति में सब चीज योग्य है, ज़ायज है । किसके लिए ज़ायज है? उसके लिए जायज है जिसके हृदय में लचक है, सरलता है, अहंकार नहीं है, दीनता है । तो कभी

भी, भूल कर भी, जो जैसे भी पूजा करता है, परमात्मा को पाने का प्रयास करता है, जिस तरीके से भी । कभी भूल कर भी उसका खण्डन नहीं करना चाहिए । खण्डन–मण्डन मन की बड़ी नीची अवस्था है, बहुत नीची अवस्था है । तो गुरुदेव कह रहे हैं । दो मुख्य साधन रहे हैं, और हम दोनों को ही मानते हैं, भक्ति प्रेम और ज्ञान । परन्तु धीरे–धीरे उसको ऐसे मार्ग पर ले आते हैं जहां साधक को भक्ति में भी आनन्द मिलता है और बुद्धि के मार्ग, ज्ञान मार्ग में भी आनन्द मिलता है । तनाव उत्पन्न नहीं करते है । जो दोनों में भेद देखता है वो अभी मन के स्थान पर है, वो अहंकार के स्थान पर है । मूर्ति भी पूजा के योग्य है, मनुष्य की पूजा के योग्य है । और बगैर रूप के, बगैर नाम के जो परमात्मा है उसे ज्ञान साधन करना है । ज्ञान साधन में मुख्यतः ये होता है । अंतिम मंजिल कह रहा हूँ कि अपने अस्तित्व को मिटा देना है । क्रिस्चियनिटी (ब्रीतपजपंदपजल) में उदाहरण देते हैं कि शुरू में परमात्मा ने उद्यान बनाया, बाग बनाया और दो जीव वहां रखे हैं । और कहा कि ये एक वृक्ष है, इसका फल नहीं खाना है । परमात्मा ने दोनों जीवों को अपने जैसा ही बनाया था । परन्तु माया के समीप छोड़ दिया है जब तक व्यक्ति परमात्मा के रूप में समाया रहता है माया उस पर प्रहार नहीं कर सकती है । माया संक्षिप्त में द्वन्द सिखाती है । मैं और तू सिखाती है, मैं और तू में झगड़ा । मैं और तू में आर्कषण आदि । माया का वर्णन भी आसान नहीं है परन्तु संक्षिप्त में, मैं और तू हैं, और ज्ञान में न मैं है और न तू है केवल परमपिता परमात्मा है। उसको वर्णन करने में ही व्यक्ति फंस जाता है । तो वो दोनों जीव कुछ समय तक तो आनन्द रूप, आत्म–आनन्द में रहे, परन्तु एक दिन कहने लगे कि परमात्मा ने ये क्यों मना किया है कि इस वृक्ष का फल नहीं खाना । अग्रेंजी में कहते है; 'फॉरबिडन फ्रूट्स आर स्वीट्टर' (थ्वतइपककमद तिनपजे ंतम ेूममजे) । जिन बातों को या जिन फलों को मना किया जाए, खाने के लिए, उनके लिए उत्सुकता उत्पन्न होती है, उनमें कुछ अच्छाई नजर आती है । ये मनुष्य की बड़ी कमजोरी है । प्रत्येक मनुष्य की कमजोरी

है । ये मन के पीछे लगता है । बहुत कम लोग बुद्धि के पीछे लगते हैं और बहुत ही कम लोग अपनी आत्मा को परमात्मा में लय रख कर जीवन व्यतीत करते हैं, बहुत ही कम । तो आपस में बात की है । क्या हो जाएगा अगर फल खा लेंगे तो क्या हो जाएगा – हम तो आत्म–स्वरूप हैं ? तो फल खा लिया, परिणाम क्या हुआ ? उनकी स्थिति, जो आत्मा की स्थिति थी, आत्मा से स्थिति हटकर मन के स्थान पर आ गई । एक स्त्री थी एक पुरुष था । वो मन के स्थान पर आने से ही एक दूसरे के प्रति भाव उत्पन्न हो गया । लगे अपने आपको ढकने के लिए । परमात्मा का 'एम्बैसेडर' (।उइॅकवत) आ कर पूछता है कि हे आदम, तुमको किसने कहा था कि ये फल खाना । हां, हम भी मन के पीछे लग जाते हैं, लगे हुए हैं और हम सब दुखी हैं । प्रत्येक व्यक्ति के भीतर में आत्मा है, परमात्मा की अंश है, परमात्मा है । आत्मा परमात्मा एक ही है । आत्मा के ऊपर जो आवरण है शरीर, प्राण, मन, बुद्धि, आनन्द का । उसके कारण हम समझ रहे हैं कि हम परमात्मा से पृथक हैं । वास्तव में आत्मा–परमात्मा एक हैं । वास्तव में हम उन दोनों जीवों की तरह, आदि में जो उनकी उत्पत्ति हुई थी, उनकी तरह हमारा भी रूप वो ही है, परन्तु हमने मन के कारण अपने आपको ईश्वर से दूर कर लिया और इसी कारण हम सब दुखी हैं । दुखी का मतलब है, दुख–सुख दोनों में फंसे हुए हैं, ये माया है । तो परमात्मा में पुनः लय होने के लिए दो रास्ते हैं । भक्ति का और ध्यान का । तो जैसे–जैसे अतीत के संस्कार होते हैं व्यक्ति वो रास्ता अपनाता है, और महापुरुष दोनों को ही मान्यता देते हैं । खण्डन नहीं करते किसी रास्ते का । ये खण्डन–मण्डन मन का है । कोई ज्ञानी कहे कि भक्ति ठीक नहीं है, तो उसने ज्ञान समझा नहीं है । ज्ञान में होता क्या है, केवल आत्मा ही आत्मा, आत्मा । उसमें अपेक्षा है ही नहीं बुराई–भलाई की । वो कैसे कह रहा है कि ये बुरा है, भला है । तो उसने अभी तक ज्ञान को समझा ही नहीं । वो अभी मन और बुद्धि के पीछे लगा हुआ है, तर्क–वितर्क के पीछे लगा हुआ है । ज्ञान का मतलब है आत्मा–परमात्मा का एक जानना

और भक्ति का मतलब है व्याकुलता । बच्चा है, नन्हा सा बच्चा है, मां किसी कारण उस बच्चे को घर में छोड़ कर बाहर चली जाती है थोड़े समय के लिए । बच्चे की नींद खुल जाती है । उसको भूख जल्दी लगती है । उस बच्चे की स्थिति देखनी चाहिए, वो कैसे रोता है, कैसे व्याकुल वो होता है, कैसे तड़पता है । इस बच्चे की, इस सरल बच्चे की सरलता आनी चाहिए, उसकी व्याकुलता, उस मां रूपी परमात्मा को पाने के लिए व्याकुलता, उसे भक्ति कहते हैं । जब तक मां की गोद उसे नहीं मिलती, पड़ोसी उसको उठाते हैं परन्तु उसका रोना बन्द नहीं होता है । बात तो एक ही होती है । प्रत्येक व्यक्ति का जो बाहर से जिस्म है वो एक जैसा ही होता है । वो लोग बच्चे को खाने–पीने की चीजें भी देते हैं, खिलौने भी देते हैं परन्तु उसको संतुष्टि नहीं होती है । परन्तु जैसे ही मां आती है वो उसको उठाती है वो बिल्कुल शांत हो जाता है । तो संसार के कितने ही पदार्थ क्यों न हमें रोचक दिखें, हमारा मन उसमें फंस जाता है, परन्तु संतुष्टि नहीं होगी, जब तक हमको भगवान, परमपिता परमात्मा हमको मिल न जाए । भक्त का ये लक्ष्य है । तो आगे जाके इस प्रकार की भक्ति ज्ञान का रूप भी धारण कर लेती है, और ज्ञानी भी, जैसे भगवान कृष्ण, कभी ज्ञानियों से बातचीत करते हैं, कभी भक्तों से बातचीत करते हैं, उनमें दोनों रूप थे, भले ही उद्धव जी के अहंकार को ढीला करने के लिए, प्रेम की जीवित मूर्तियों के पास, गोपियों के पास भेजा उनको । कुछ भी हो ये कहना कि भगवान ज्ञान स्वरूप नहीं थे, ये गलत होगा । वो अहंकार नहीं चाहते थे, चाहे कोई प्रेमी हो, चाहे ज्ञानी हो, दोनों में अहंकार से दूर रहना चाहिए । इसीलिए भक्ति में दीनता है । ज्ञानी में दीनता अपने–आप आ जाती है । यदि वो सच्चा ज्ञानी है । यदि वो तर्क–वितर्की है । वो किताबें पढ़ ली बस वो समझता है कि मुझे सब कुछ 'नौलेज' (दवूसमकहम), ज्ञान हो गया, सब कुछ ज्ञान हो गया वो कुछ नहीं है । सच्चा ज्ञानी वो है जो आत्म–स्थित हो गया । अपनी आत्मा को परमात्मा में विलय हो गया । वो गुण–अवगुण दोनों से मुक्त हो गया । और सच्ची भक्ति

जो है वो बच्चे, शिशु का जो व्यवहार है वो कुछ–कुछ उसके अनुसार है और उस व्याकुलता से, और किस प्रकार अपने प्रीतम को रिझायें । भक्ति में एक साधन नहीं है, भक्ति में व्याकरण नहीं है, भक्ति में एरिथमैटिक (।तपजीउंजपब) ये चीजें नहीं हैं, सरलता है, दीनता है, एक ही लक्ष्य है कि मेरा प्रीतम किसी तरह रीझ जाए मुझ से । मैं जिस रूप में उसकी साधना कर रहा हूँ उस रूप में प्रकट होकर वो मुझे अपनी चरण रज बना ले । तो भूल कर भी हमारे सत्संगियों को तर्क–वितर्क में नहीं पड़ना है । दोनों मार्ग भक्ति का और ज्ञान का दोनों का आश्रय लेना चाहिए । विशेषकर आज सिर्फ हमारे यहां संत मत में या गुरु मत में, गुरु ही हमारा आश्रय है और गुरु ही हमारे कह रहे हैं कि हम दोनों को श्रद्धा से अपनाते हैं, ये नहीं की बुद्धि से ही अपनाते हैं, मानते हैं । नहीं, श्रद्धा से अपनाते हैं । और दोनों रास्तों पर चलते हैं । प्रेम को भी अपनाते हैं और ज्ञान को भी अपनाते हैं । संक्षिप्त में प्रार्थना करना, भजन पढ़ना ये भक्ति का साधन है । और जो मौन होकर बैठते हैं ये ज्ञान का साधन है । ज्ञान में अपनत्व को बिल्कुल खो देना है । मैं और मेरेपन को खो देना है । और इस मौन में कुछ नहीं रह जाए केवल परमपिता परमात्मा रहे । मैं, मेरापन खत्म हो जाए । अभी मंजिल हमारी दूर है । परन्तु समझ लेना चाहिए अच्छी तरह से कि मौन के अर्थ क्या हैं । लोग–बाग कहते हैं कि बड़े विचार आते हैं । जितना मौन करते हैं उतने अधिक विचार आते हैं । अभी मौन हमने समझा नहीं है । मौन; शरीर का भी मौन है, मन का भी मौन है, बुद्धि का भी मौन है, ज्ञान–उसका भी मौन है । उसके बाद आनन्द आता है, उसका भी वो ही रूप है उससे भी निवृति है । किसी के साथ आसक्ति नहीं है । किसी के साथ अपना बंधन, अपने आपको बंधन में नहीं डाल दिया है, उससे भी आजाद हैं । बुद्धि से भी आजाद हैं । आनन्द से भी आजाद हैं । आगे चल के, क्या है वो ? परमात्मा ही जानता है ।

''तर्के दुनिया, तर्के उकबा, तर्के मौला, तर्के तर्क । ''

मौन का ही रास्ता हमारा आगे का रास्ता है । संसार के विचारों को छोड़ो । संसार से, जो हमारे जो बंधन हैं, उनसे त्याग करो । फिर आएगा कि, परलोक के विचार आएंगे, कि परलोक में बड़े सुख मिलते हैं । भगवान कृष्ण ने भी परलोक के कितने रूप दिखाये । हमारा वो लक्ष्य नहीं है । उन विचारों को भी छोड़ना है। तत्पश्चात परमात्मा का विचार आएगा । उन विचारों को भी छोड़ना है । फिर छोड़ने का विचार आएगा । तर्क–वितर्क, छोड़ने के विचार को भी छोड़ना है । वो मौन है । वो मौन धीरे–धीरे गाढ़ मौन होता हुआ आत्मिक मौन हो जाएगा, आत्मज्ञान हो जाएगा, परमात्मा का रूप हो जाएगा । ये रूप हो जाएगा, ये कुछ नहीं कहा जा सकता, इसका अनुभव करके ही जबान कट जाती है । वर्णन करते हैं तो मन और बुद्धि के स्थान पर आ जाते है। बूंद सागर में मिल जाती है, सागर रूप हो जाती है । इसके आगे एक और मंजिल है । मगर वो महापुरुषों को प्राप्त होती है । देवताओं को, या संतों को, उच्च कोटी के संतों को प्राप्त होती है । जैसे महापुरुष, जैसे भगवान कृष्ण, समय–समय पर अवतार लेते हैं इसी तरह महापुरुष भी, जो बहुत उच्च कोटि के जो संत होते हैं वो हमारा उद्धार करने के लिए, वो महान शक्ति के पृथक हो कर यहां सांसारिक रूप धारण करके हमारी सेवा करते हैं । वो बहुत ऊँची अवस्था है । तो साधना में दोनों को अपनाएं, मौन साधना को भी दृढ़ करें तथा अपने जीवन को ईश्वरमय बनाइये, ईश्वरमय बनाएं । ईश्वर का क्या रूप है? गुण क्या है, क्षमा, क्षमा, क्षमा । और किसको क्षमा करना है । अपनों को तो क्षमा करना, हो सकता है सरल हो, वो भी बड़ा कठिन है । परन्तु जो हमारे जानलेवा हैं, हमारे शत्रु हैं, उनको क्षमा करो । हजरत ईसा कहता है 'फॉरगिव सेवन्टी टाईम्स सेवन' (थ्वतहपअम `मअमदजल जपउमे`मअमदद्ध। इस का मतलब है हजारों बार क्षमा करना पड़े, तो क्षमा आपका स्वरूप बन जाए, लोग–बाग आपको पीटें, आप क्षमा करते चले जाएं । प्रेम, परमात्मा प्रेम स्वरूप हैं, अप्रयास, सब से प्रेम करें । प्रेम में सेवा भी आ जाती है । प्रेम में सहायता भी आ जाती है । प्रेम में बलिदान आ जाता है ।

परमात्मा का स्वरूप जो है, आत्मा का जो स्वरूप है, आपका जो वास्तविक स्वरूप है, वो प्रेम है । ज्ञानी का भी, भक्त का भी, दोनों का ही प्रेम है । तो प्रेम कहने से कुछ नहीं होगा । विचार, मन, बुद्धि और व्यवहार से प्रेम अपने–आप विकसित हो जाएगा । सहज रूप में, प्रेम रूप बन जाएगा । सहज । इसलिए हजरत ईसा कहता है कि एक तरफ कोई थप्पड़ मारे तो दूसरा गाल आगे कर दो, दूसरा थप्पड़ ले लो । ये कैसा प्रेम ? कोई हमारी हानि करे और हम उसकी सेवा करें । फ़रीद जी कहते है कोई तुम्हें मारे–पीटे, मुक्का मारे तुम उन के घर जा कर उसके पांव दबाओ । आप कहेंगे कि ये कैसी साधना है ? ऐसी साधना करनी होगी, जब तक हम ऐसी साधना नहीं कर पायेंगे, तब तक हम किनारे पर कंकर चुनते रहेंगे । सेवा, तन–मन–धन की सब के लिए, अपने बच्चों के लिए, बीबी के लिए, पति के लिए; नहीं, उनकी सेवा तो करनी है, प्रथम सेवा उन्हीं की है, परन्तु संसार ही ईश्वर का रूप है, सारे संसार की सेवा करनी है, और बड़ी दीनता के साथ, और बड़े स्नेह के साथ । ये मुख्य गुण परमात्मा के हैं, और ये मुख्य गुण मनुष्य के भी होने चाहिए । सेवा भी एक साधन है भक्ति का । प्रेम भी एक साधन है भक्ति का । जरूरी नहीं है कि ऑख बन्द करके ही या कोई और जाप करके परमात्मा की सेवा करनी है, नहीं । ये सेवा एक महान साधन है । हनुमान जी ने क्या किया ? भगवान की सेवा की । इसलिए गुरु किया जाता है । प्रत्येक व्यक्ति को, एक अपना आधार बनाना होता है । और उसको आधार बनाकर जो पहले के व्यक्ति हैं, जिन्होंने 'ग्रेजुयेशन' (ळतंकनंजपवद) वगैरा कर ली है । प्रत्येक व्यक्ति का, कोई न कोई महापुरुष उसका लक्ष्य होता है, तो बच्चे या बड़े उस के आधार पर चलना चाहते हैं, उसके जीवन का अनुसरण करना चाहते हैं । किसी ने 'वर्ड्सवर्थ' (वतकूवतजी) को अपना लक्ष्य बनाया । किसी ने 'टेनीसन' (ज्मददल`वद) को बनाया, किसी ने 'शेक्सपियर' (ींामे च्मतम) को बनाया, परन्तु हमारे यहां राम, भगवान कृष्ण, भगवान शिव, महापुरुष संतों में कोई गुरु नानक को मानता है, कबीर को मानता है, कोई भेद नहीं है, सब ठीक है

। कभी ये नहीं कहना चाहिए वो उसको मानता है, मैं उसको मानता हूँ, मैं उसके हाथ का खाना नहीं खाऊँगा, ये सब गलत बाते हैं । भक्ति को समझा ही नहीं । वो हमारा ईष्ट–देव सर्वव्यापक ही है । वो सबका है, वो मेरा नहीं है सबका है । हम ये कह दें कि परमात्मा केवल मेरा ही है, कितनी बेवकूफी है । वो सबका है । इस तरह हमें भी सबका ही सेवक बनना चाहिए । परमात्मा सब की सेवा करता है और सेवा करता थकता नहीं है । हमें थकावट आ जाती है । तो अभी हम योग्य नहीं बने हैं । कमजोर हैं ।

अध्यक्षीय सदुपदेश

जीवन शैली स्तुति सम्पन्न हो

डा. करतार सिंह

परमात्मा का स्मरण (याद) कैसे, किया जाये - इस विषय पर गुरुदेव ने फरमाया कि पहला काम, जब हम प्रातः काल बिस्तर से उठते हैं उस समय थोड़ी देर के लिये आँखें बन्द रखें और ख़याली (वैचारिक) तौर पर यह विचार बनायें कि आप श्री गुरुदेव के चरणों में नतमस्तक (सिर रखें) बैठे हैं, आप उनको विचारों से प्रणाम कर रहे हैं और गुरुदेव आपको स्नेहसिक्त आशीर्वाद दे रहे हैं। प्रणाम, नमस्कार, नमस्ते अभिवादन आदि करके प्रार्थना करनी वाहिये कि हे प्रभु! मुझे शक्ति दो, सारे दिन में आपकी याद में मग्न बना रहूँ और जितना भी कार्य करूँ आपकी याद में करूँ, मर्यादानुसार करूँ। मेरे से जहाँ तक हो सके (हे गुरुदेव) कोई बुराई न हो। हे प्रभु! हमें साहस दो कि हम अन्य सबकी सेवा करें व सबको प्रसन्न करने का प्रयास करें। फिर जब चारपाई (बिस्तर) छोड़े तो मौन रूप से, मन ही मन कोई भजन कीर्तन आदि भी गुनगुनाते रहें ताकि मानसिक प्रेरणा का तार न टूटे, विचार इधर-उधर न जायें और मन आपका ईश्वर के चरणों में रमा रहे।

स्नान करते समय भी आपको प्रभु स्मृति बनी रहनी चाहिये और मन ही मन ईश्वर के गुणगान करते रहें कि हे ईश्वर! तू कितना दयालु है, कितना महान है, स्नान के समय परम ब्रह्म के आनंद में सराबोर रहें। श्रद्धेय आचार्य श्री अक्षय कुमार बनर्जी (गोरखपुरी) कहा करते थे कि स्नान करते समय यह ख्याल करें कि हे परमात्मा! आप जिसे (स्वयं को) स्नान करा रहे हैं वह भी आप परमात्मा का रूप है ताकि आपके भीतर और बाहर का वायुमण्डल ईश्वरमय बन जाये, कोई बुरे विचार

न आवें, यदि प्रार्थना करनी है तो यह प्रार्थना करें कि प्रभु, अपने अनुसार निर्मल, हमें भी ुनीत निर्मल बना दो। तबियत ठीक न हो तो मानसिक स्नान कर लें यही शुद्धि आचरण है।

यथा सम्भव अपने घर में एक अलग स्थान बनाना चाहिये कि जहाँ पर आप दैनिक उपासना (संध्या पूजा) करें। रोज उसी नियत स्थान पर नियत समय पर साधना के लिये बैठें। जब आप अपने साधना कक्ष में प्रवेश करें तो विचार कीजिये कि किसी महापुरुष के सामने जा रहे हैं कि जिस प्रकार आप मन्दिर जाते हैं और तब आप उस मन्दिर के देवता के आदर भाव में रत रहते हैं। मन मन्दिर के देवता के चरणों में विनम्र भाव से नतमस्तक होकर प्रतीक्षा करिये कि उनका अनुग्रह आप पर बरस रहा है, आनंद से अनुग्रहित हैं। वे आपको आशीर्वाद सूचक देख रहे हैं। आप उनको पिपासुवत निहार रहे हैं। इस प्रकार सच्चे मन से, विमग्र भाव से, थोड़ी देर बैठने से, दया की प्रतीक्षा करने से आप पायेंगे कि आपका मन करुणा से गल्वित होकर वैसे ही भीग जावेगा जैसे कपड़ा पानी से भीग जाता है।

जब उपासना (अभ्यास) शुरु करें तो पहला ध्यान यह रहे कि आपको बाहर से भीतर (अन्तर) में प्रवेश करना है। किसी एक संख्या के अनुसार (एक माला या 21 या 11 बार) ऊँ तत् सत् का जप करें (या हे परमात्मा, मुझे मायावी विचारों से, मायावी कृत्यों से मायावी प्रलोभनों से, मायावी धोखे से बचा, या जब श्वास लें तो विचारें कि सिवाय परमात्मा के इष्ट या गुरु में लय होकर अपनी नाभि से ऊँ कर सुमधुर उच्चारण करें (भावनात्मक ऊपर को उठावें)। आज्ञा चक्र दोनों, भौहों के बीच में वैचारिक स्थान पर प्रभु का स्मरण और ब्रह्म रन्ध्र (सहलार) पर सत का स्मरण करें (यह सब हल्के श्वासन में हो, जोर न लगे) और तब श्वासन में (वापसी) विचार पर ऊँ का ब्रह्मरन्ध्र पर, तत् का आज्ञा चक्र पर और सत्य का हृदयचक्र पर समोवेशित (हल्की

वैचारिक चोट) करें। इसका सारांश यह है कि कोई भी अन्य विशेष विचार प्रभावित न रहे। केवल श्वास प्रश्वास में प्रभु प्रेम में ही प्रेम रहे। यह वैचारिक क्रिया योग है। आप चाहें तो अब आप प्रेम विमोदित किसी भी भक्त की (मीराबाई, सूरदास, तुलसीदास, नामदेव, तुकाराम, नानकदेव, इत्यादि) कोई वाणी (भजन) जिसमें उपदेश न हो। अपितु स्तुति (कीर्ति, महिमा) हो उसे सस्वर पढ़े (गुणगुनायें या गावें) हल्का कीर्तन भी कर सकते हैं। ऊँ राम भी स्वरित किया जा सकता है।

अब आप सोचें कि आप और आपके ईष्ट एकलयता से ऐक्यमय बैठे हैं – यहाँ पर अन्य कोई है ही नहीं। अब जो भी अभ्यास आपको साधना के लिए बताया गया हो उसे करें। ध्यान रहे कि इष्टदेव की उपस्थिति का आभास बना रहे। आपके मनमस्तिष्क में इष्टदेव की सामीप्यता का भाव उत्पन्न हो जावे, वैचारिक आह्वान करके यदि आपको विह्वलत उपजे या प्रेमाश्रु टपकें तो अनुग्रहीत हो इष्टदेव के चरणों के में अर्पण कर दें। प्रेमाश्रु से इष्टदेव के (चरण धोवें)। मानसिक प्रेमासन पर इष्टदेव को आसीन करें। ध्यान करें कि वे आशीर्वाद दे रहे हैं, और आप उनके प्रति अपने प्रेम की भीख मांग रहे हैं। साधना के समय आध्यात्मिक तरंगे उजाग्र होती हैं तो मन भी वैचारिक बहाव में तेज रहता है। जिस विषय को भी सोचेगा उसका सविस्तार चिन्तन करेगा। इसलिये यथा सम्भव अभ्यास के समय कोई विघ्न अन्य बुराइयों अच्छाइयों का चिन्तन न करें, किसी कार्य के फलाफल की न सोंचे अन्यथा इस परिचिन्तन में लगने से वह इतना दृढ हो जावेगा और आपको दबोच लेगा, हटाये न हटेगा यदि इस मानसिक कुश्ती में आप स्वयं हार रहे हो तो उस समय थोड़ी देर के लिए साधना बन्द कर दें। सम्भव हो सके तो थोड़ी देर बाद पुनः साधना करें ताकि मन को बहाना पकड़ने को कुटेव न पड़ जाये। साधना में कोई बुरा विचार न उठे (केवल शुभ ही बातों का चिन्तन रहे। कोई चिन्ता न हो। पूर्ण 'वेश्वास रखो की जिसकी शरण में बैठे हो वही "मेरा प्रभु" है, वही एकमात्र मेरा शुभेच्छु हितचिन्तक है। उससे सबको प्रेम

मिलता है। अपने आराध्यदेव को ही सर्वस्व जानो, महान से महान समझो।

वस्तुतः आत्मा से शक्ति संचारण पाकर अपना मन ही अनेक रूपों से भासता है। फिर जरा अभ्यस्त होने पर, यही आन्तरिक लगन को दर्शन के लिए जगाता है कि भीतर में सिवाय ईश्वर के कोई अन्य ध्यान न आये। ये धारणा बनती है फिर समाधि में ध्यान करने वाला समाधीन हो जाये। ध्याता, ध्यान ध्येय या ज्ञाता, ज्ञान, ज्ञेय एकसम हो जावे तो आपा (अर्हता की वृत्ति) समाप्त हो जाता है। केवल परमात्मा, तू ही तू केवल रह जाता है। इस स्थिति में प्रज्ञता आती है। इसे ही शास्त्रों में ऋतम्भरा बुद्धि की जागरूकता कहते हैं।

प्रायः लोग कहते हैं कि साधना में बैठते हैं तो विचारों का तांता लग जाता है। जब आप किसी उच्च अधिकारी (कलेक्टर आदि) के पास मिलने जाते है तो सिवाय एकमात्र विषयक विचार के क्या अन्य बातों का ध्यान कभी आपको उस अधिकारी से भेंट के समय आता है? हम दुनियांदारों की खुशामद एकाग्रता से कर सकते हैं पर प्रभु की ओर एकाग्रमन क्यों नहीं बैठ पाते? इसके अर्थ है लगन की कमी, विश्वास की कमी, प्रेम की कमी। आत्म विश्लेषण करिये।

जैसे-जैसे लगन बढ़ती जायेगी विचारों की गुणावन भी धीरे-धीरे कम होती जावेगी। जब किसी उच्च अधिकारी के पास बैठते हैं तो उसके प्रति बड़े सम्मान के साथ बैठते हैं परन्तु क्या इसी सम्मान के साथ ईश्वर या गुरु के चरणों में भी बैठते हैं? वास्तव में हृदय में हमारे वह सम्मान नहीं है। यदि सम्मान है तो एकाग्रता पूर्ण ध्यान क्यों नहीं है। ध्यान अवश्य लगना चाहिए। जब तक हमारे अन्दर गम्भीरता नहीं आवेगी, मन प्रभु के चरणों में केन्द्रित नहीं होगा। अगर विचार आते हैं तो दो बातें (1) या तो इष्ट के प्रति श्रद्धा नहीं है (2) या इष्ट को महान नहीं समझते मामूली (साधारण) समझते हैं। मेरे विचार में इष्ट के प्रति आपमें

गंभीरता नहीं है। केवल मात्र श्रद्धा की कमी के कारण एक रोजमर्रा क्रम पर्याय (Routine) नात्र के लिये 2-4 मिनट बैठ भर जाते हैं और बस उठ चले। सोच लिया क्या करें मन नहीं लगता, मन के अधीन हो। गये चले थे मन को आधीन करने, उल्टा हो गया। मन को शुद्ध करना ही होगा तब काम बनेगा।

खाना खाने के लिये बैठे कि खाने की सुगन्धियों में मन लग गया, ईष्ट को भूल गये। कितना अनर्थ है। क्या कभी खाते समय आप अपने समाज को याद रखते हैं कि समाज में अनेकों को एक समय खाना भी नहीं मिल पाता और हमें उस प्रभु की दया से मिल रहा है। थाली सामने आते ही प्हले प्रसन्नता लाइये, स्वीकारात्मक बनिये, आभारी बनिये। फिर शुद्ध भोजन को मानसिक रूप से इष्ट को समर्पित करिये। अन्न ही तो ब्रह्म हैं। अन्न ही तो ब्रह्म है 'त्वदीयं वस्तु गोविन्दं तुम्यभेव' का समर्पये विचार रखें। आप भोजन करते समय विचारें कि सबको भोजन मिल रहा है, संसार तुष्ट हो रहा है।

जब तक लोक परलोक को न्योछावर नहीं करोगे, तथा सब कुछ ईष्ट ईश्वर के चरणों में केन्द्रित नहीं कर दोगे तब तक न तो एकाग्रता मिलेगी न विचारों से मुक्ति मिलेगी क्योंकि ईष्ट के प्रति श्रद्धा नहीं है, भटकाव है। संध्या (पूजा) में बैठने के बाद कुछ न कुछ प्रार्थना करनी चाहिये कि हे प्रभु! आप ही सहायता करें। प्रभु से कुछ मांगना चाहिये इससे अहम् टूटता है। कुछ लोग कहते हैं कि क्या परमपिता परमात्मा हमारे सुख दुख को नहीं जानता? हमें माँगने की क्या जरूरत है? पर क्योंकि हमें पक्का विश्वास उसके प्रति अभी नहीं है, इसीलिये मांगना चाहिये, भीख मांगिये उसके प्रेम की। इससे सरलता उपजेगी। प्रभु दयालु इतने हैं कि यदि हमारी मांग यथार्थ में सच्ची है तो प्रभु अवश्य देते हैं। जो जो मांगो ठाकुर अपने से सोई सोई वह देवे। उसके घर में इतनी दया है कि हमारे प्रत्येक सुख को परमात्मा देता है। जो कुछ हम मांगेंगे हमें सब दे देगा,

हमें तुरन्त दे देता है। इसलिये सरल शिशु बनकर उस इष्ट प्रभु से सरलता से यदि मांगो तो ईश्वर देता है (ध्यान रहे करतापन न आने पाये) ध्रुवजी को भगवान के क्यों दर्शन नहीं हुए? दीनता का अभाव था, सरलता नहीं थी। इस मार्ग में कोमल हृदयता चाहिये। यदि आप कठोर हृदय के हैं तो ईश्वर भी आपको नहीं देगा (क्यों देवे?) जो भी जरूरतमंद आपके पास आए आप जरूर सेवा करें, यही धर्म है, यही बड़ी आवश्यक बात है।

आमतौर पर हमारे घरों में खाने के समय लड़ाई झगड़े होते हैं। क्योंकि उस समय स्त्री दफ्तर या काम पर जाने से पहले दिन के खर्चे के लिये पैसे माँगती है तो उस समय तनाव हो जाता है। इसलिये गुरुदेव कह रहे हैं कि खाना खाने के समय ध्यान रखो कोई क्रोध या उद्विग्नता तो नहीं है क्योंकि क्रोधादि के आवेश होने से, भीतर में एक प्रकार का तनाव होने के कारण विष पैदा होता है, तब शरीर कैसे पुष्ट बनेगा। प्रसन्नतापूर्वक प्रसाद पाइये। इस प्रकार कामनाओं के आवेश में बैठना चाहिये। समक्ष समझकर कृतज्ञता से भोजन करें तो भोजन आपको अच्छा भला (शुभ) बनायेगा। क्रोध में भोजन करेंगे तो पेट में दर्द भी हो सकता है। क्रोधावेश हो तो उस समय खाना मत खाइये जब द्वेष भाव उतर जाये तो खाना खा लीजिये। खाना खाते वक्त वातावरण शुद्ध होना चाहिये। खाना खाते समय जो भी मानसिक प्रभाव होता है उसकी छाप हमारे हृदय में समा जाती है। खाने के कमरे में अपने इष्टदेव की तस्वीर टांग सकते हैं। तस्वीर की पूजा निषिद्ध है पर उससे इष्ट का सुमिरन ले सकते हैं। यदि गाना सुनना हो तो भजन सुनिये ताकि विचार ईश्वरमय रहे। खाना खाते समय विचार कीजिये कि गुरुदेव (इष्ट) आपके सामने बैठे हैं। उनका प्रकाश भोजन पर पड़ रहा है। प्रकाश से भोजन पवित्र हो रहा है उस भोजन को गुरुप्रसादी समझकर के ग्रहण कीजिये (जूठन नहीं) उनके गुणों की याद में खाना खा रहे हैं। परमात्मा की याद सतत् बनी रहे। कृतज्ञ और अभारी रहें, गद्‌गद रहें। इससे आप में शुभ विचार पैदा होंगे।

जिन विचारों के साथ आप भोजन करेंगे वैसा ही खून बनेगा। और शरीरिक नाड़ियों में वैसा ही रक्त वैसे ही विचारों को संस्कारित करेगा, और ऐसा होता है। अच्छे विचारों के साथ खाने से मानसिक छाया अच्छी पड़ेगी इसलिये खाते समय राग-द्वेष से रहित होकर खायें। थोड़ा खाना चाहिये। खाते समय बातें न हों या कम हों। दैनिक खुराक (भोजन) को समझ लें कि कितने भोजन से पेट भरता है। बस उसे 25 प्रतिशत कम खायें। कम खाने से हल्कापन रहता है तन्द्रा नहीं आती। उतना खाना पर्याप्त है जो हज्म हो जाये और आप स्वस्थ रह सकें। अच्छी स्वादिष्ट वस्तु मात्रा में कम खायें ताकि जबान स्वाद के रस के आधीन न हो सके। यदि आपने खाने में रसनात्मक रस का चटकारा लिया तो संस्कार बनेगा। यही अनुकूल या प्रतिकूल विचारधारा बनाता है। Drink your solids, and sip your drinks अर्थात् खाद्य को खूब चबाकर लेहय बनाकर खाओ और पेय वस्तु को भी सरल तरलता से पीजिये, इससे दांतों का कार्य पेट को नहीं करना पड़ेगा। पाचन क्रिया सरल हो जायेगी क्योंकि मुँह का तरल पदार्थ भोजन में सुचारू रूप से मिश्रित हो सकेगा।

भोजन करते समय यदि लगे कि नमक (या मसाला या मिठास या मिर्च, आदि) कम है तो बनाने वाले से तुरन्त कुछ न कहें। खाना अच्छा बना तो ठीक, कम स्वदिष्ट बना है तो ठीक। भोजन के उपरांत जब वातावरण ठीक हो तो समझा सकते है कि खाना बनाने में क्या कमी थी। इसका सारांश यह है कि बेकार के लिए कोई मन मुटाव या द्वेष खाना खाते समय खड़ा न हो, आनंद रस बहे। खाने के बाद कृतज्ञता प्रकट होनी चाहिये, इसे संतुष्टि उपजेगी।

जब अपने लिये कोई नये वस्त्र बनायें तो उन कपड़ों में से कुछ वस्त्र अपने इष्टदेव को भेंट कर दें। यदि सम्भव हो सके तो मानसिक रूप से उस वस्त्र को इष्ट को सम्मानपूर्वक भेंट करें और उस वस्त्र को पहले पहनकर अपने से बड़े प्रेमी व्यक्ति को आदर से नमस्कार करें। इससे प्रभु की स्मृति बनी रहेगी और घर में सत्कार शिष्टाचार का व्यवहार

बढ़ेगा। वस्त्र भेंट करने से इष्ट गुरु में श्रद्धा बढ़ेगी और कंजूसी (कश्पणता) का दोष नहीं बढ़ सकेगा। आपने जो वस्त्र इष्ट या किसी पात्र को दे दिया, देने को अर्पण करने को, याद रखें ओर देने के बाद वह सज्जन उसका कुछ भी करें आपको सरोकार नहीं क्योंकि वस्तु पाने के बाद वस्तु का स्वामित्व उनके पास चला गया। जब तक सहानुभूति नहीं होगी सरलता नहीं उपजेगी। ज्ब तक मन के ये अपनेपन के भाव नहीं टूटेंगे अधिकारी नहीं बन पाओगे। करुणा सेवा के भाव जगें, सहानुभूति का गुण अन्दर में उपजे। अप्ना निरीक्षण परीक्षण करते रहें कि दीनता और सरलता आपके व्यवहार में आ रही है या नहीं। आप दूसरों के दुख देखकर सहायता करने को तत्पर हो पाये या नहीं। यदि ह्रदय कोमल है तभी ईश्वर की करुणा के अधिकारी बन पावेंगे।

ह्रदय कोमल हो तभी आप प्रभु के चरणों में जाने के अधिकारी हो सकते हैं इसी प्रकार किसी को सुखी अवस्था में देखकर आपको भी हर्ष होना चाहिये। यदि कोई दुखी है तो प्रयास करें कि उसकी आप कुछ सहायता कर सकें, यदि किसी भूखे को आपने कुछ खाना दे दिया तो आपने प्रेम का बीज बो दिया। वह बीज उगेगा। जब तक आप प्रीतम के चरणों में सभी कुछ अर्पण नहीं कर पाते उस समय तक प्रभु प्रेम से आप वंचित हैं। मुसलमानों में जकात (दान) के लिये अपनी आय का 2 प्रतिशत निकालने का नियम है। इसी तरह हमारे यहाँ भी है। 3 पैसे प्रति रुपया अपनी कमाई में से निकालना चाहिये और उसे दान करना चाहिये या शुभ कर्म में लगाना चाहिये, जैसा आप मुनासिब समझें। इसके लिये सत्संगियों के लिये कुछ नियम पूर्वजों से चले आ रहे हैं उन्हें देखें या अपने गुरु की सेवा में ले जावें, जिससे आपका दान, सही लोगों को मिल सके। शरद ऋतु में गरीब आदमी कपड़े नहीं बना सकते इसलिये जो व्यक्ति इस योग्य हैं वे कुछ रुपया निकालकर सर्दियों में गरीबों को भी कपड़े बाँटे ताकि वे भ सर्दी से बच सकें।

दुकान या दफ्तर या जीविका उपार्जन के स्थान पर जब आप जाते हैं तो एक आध मिनट अपने इष्ट का विचार करके काम शुरू करें एवं यह विचार करें कि आप उनकी सेवा में बैठे हुए हैं और उन्हीं का काम कर रहे हैं बीच-बीच में एक आध मिनट के लिए आँखे बन्द करके हृदय में उनके दर्शन करते रहें। प्रत्येक काम सही करना चाहिये। यदि आप कहीं नौकरी करते हैं तो जितने समय आपको काम करना अनिवार्य है मन लगाकर करें। दुकानदारों को भी उतना ही मुनाफा लेना चाहिये जितना वाजिब है। यदि ऐसा नहीं करते तो वह कमाई हलाल की (शुद्ध) नहीं कहलायेगी। भजन में बाधक होगी। जब काम समाप्त करें तो भी ईश्वर की याद करके मन ही मन में धन्यवाद दें तब उठें। थोड़े दिनों करते रहने से वैसी आदत पड़ जायेगी। फिर वैसा होने लगेगा। इसका मतलव यह है कि हर समय परमात्मा की याद में बने रहो, उसका नाम हृदय में रमा रहे। वही अजपाजाप बन जायेगा। बीच-बीच में भूल जायें तो कोई हर्ज नहीं, फिर शुरू कर दें। प्रयास से साधना अपने आप होती रहती है। साथ ही साथ आपका व्यवहार सबके साथ प्रेम का हो। अपने बच्चों से तो प्रेम करना ही चाहिये परन्तु यह याद रखना चाहिये कि ये बच्चे आपके नहीं हैं, ईश्वर के हैं। आप तो एक संरक्षक मात्र हैं। जो कुछ आप उनकी सेवा करें उन्हें ईश्वर का ही समझकर करें और अपने आपको मन से उनसे पृथक समझते जायें जिससे छूटने पर दुख न हो।

रात को सोने से पहले ऐसी धार्मिक गाथायें बच्चों को सुनाइये कि जिनमें ईश्वर प्रेम, भक्ति और सदाचार भरा हो। यदि बच्चे बड़े हैं और संतमत में रूचि रखते हैं तो गुरुदेव के प्रवचन पढ़कर सुनायें। कुछ देर के लिये सामूहिक सत्संग भी करें। बच्चों को प्रेरणा मिलेगी। ऐसा दैनिक होना चाहिये। छूटे नहीं, चाहे 5-6 मिनट के लिये ही हो। बच्चों का वास्तविक चरित्र निर्माण बचपन से ही हुआ करता है और इसका उत्तरदायित्व माता पिता पर होता है।

रात को सोते समय नाम जप या माला जप करके सोइये। ईश्वर की स्तुति में गुणगान करते हुए सो जायें। मन में ईश्वर का ध्यान होना चाहिये। जिन्हें बेकार के स्वप्न अधिक आते हों उन्हें मन को साधना चाहिये। जो कुछ भी मनुष्य जागृत अवस्था में करते या देखते है वैसा ही स्वप्न आपको प्रायः दीखा करता है। विचारों के सूक्ष्म भाव बीज रूप से हमारे मस्तिष्क में रमे रहते हैं और सोने की अचेतन अवस्था में स्वप्न बनकर दिखाई देते हैं।

सही तरीके से साधना करने और चरित्र निर्माण करने से आपका जीवन सरल बनता जायेगा। हर व्यक्ति जानता है कि वह कहाँ है। यदि पाँच मिनट के लिये अपने आपको देखें तो उसे मालूम हो जायेगा कि उसमें कितनी कमियाँ हैं। उनको अपने गुरु को बताना चाहिये ताकि आपकी कोशिश और उनकी कृपा से वे दूर हो जायें। जो भी आप सोचते हैं, जिसमें आपका मन अधिक समय रमा रहता है, वैसी परछाइयां दिमाग में बस जाती हैं और उसी के अनुकूल आपके कर्म होने लगते हैं। अतः प्रत्येक काम और उसके फल को ईश्वर के चरणों में अर्पण कर दें ताकि संस्कार न बन सके। तीन प्रकार के संस्कार होते हैं। (1) बहुत साधारण जैसे पानी में लकीर डालें तो पानी उसे स्वतः गायब कर देगा। (2) जरा थोड़ा असर वाले जैसे पैंसिल से लकीर खींचना पर वह रबड़ से मिटाई जा सकती है। (1) गहरे असर से खोदी गई लकीर अर्थात् औजर द्वारा पत्थर को तराशा जाये, ये मिटाये नहीं जा सकते। ये संस्कार मजबूत होते हैं। भोगने पड़ते हैं और बड़ी-बड़ी कठिनाई से जाते हैं। ये तीन प्रकार के संस्कार हमारे हृदय में छाये रहते हैं। जो साधारण संस्कार हैं वे इस जीवन में शनैः शनैः आसानी से कटते चले जाते हैं। इसलिये जीवन शैली ऐसी बनानी चाहिये कि अच्छे बुरे कोई भी संस्कार न बनें। यही राग द्वेष से मुक्त होने का तरीका है। कोई गाली दे, हम उद्विग्न न हों अपितु हम उसे भूल जायें। संत बिनोवा भावे जी लिखते हैं कि 70-72 वर्ष पहले की बातें कभी-कभी अब भी याद आ जाती है तो रोंगटे खड़े हो

जाते हैं। श्री गुरुदेव (महात्मा श्रीकृष्ण लाल जी महाराज) कहते थे कि कोई 40-50 वर्ष पहले किसी ने बुराई की थी तो आज भी हमारे वे संस्कार उभर आते हैं जो हमें विचलित कर देते हैं। इसलिये किसी बात से लगाव नहीं होना चाहिए, अनासक्त रहना चाहिये। राग-द्वेष दोनों को गुरु के चरणों में अर्पण करके भूल जाना चाहिये। परन्तु देखते हैं कि अपना सरल जीवन हमने स्वयं इतना असामान्य बना लिया है कि भीतर में भी बनावट छा गई है और बनावटीपन का तनाव छाता चला जा रहा है। तनाव युक्त व्यक्ति को ही अधिक स्वप्न आते हैं। सब विचार गुरु अर्पण कर देना चाहिये ताकि आप स्वतंत्र रह पावें।

सेवा सबकी करो पर किसी आशा या बदले की भावना के साथ या संशय के साथ नहीं होना चाहिये। बाप को बेटे से कोई आशा नहीं रखनी चाहिये। ये सब कौटुम्बिक झगड़े आशा की ही उपज है। पुत्र सेवा करते हैं या आदर देते हैं तो भगवान की कृपा है। होता यह है कि जब हम जिनकी ओर आशा लगा कर देखते हैं उनसे हमें निराशा मिलती है। इसलिये सिवाय ईश्वर के और किसी से आशा मत रखिये। उससे लगन लगी रहे तो वही सब काम अपने आप पूरा करते चले जाते हैं। हम अपनी ओर नहीं देखते, दूसरे की ओर देखते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि हम भीतर से दुखी रहते हैं। हमारी रहनी-सहनी यह होनी चाहिये कि भीतर में हम आनंदमय रहें, सुखमय रहें। जो आपके पास आये उसे भी सुख मिले, आनंद का आनंद प्रदान हो, तो आनंद का मंडल बने। जब तक हम हर्षित नहीं होंगे आत्मा तक नहीं पहुँच सकते। हर्ष से उद्विग्नता कम होकर शान्त स्थिति आती है। संतोष उभर कर आना चाहिये। संतोष, हर हालत में प्रसन्न रहने को कहते हैं। वास्तव में हमें सोना, शरीर को आराम देना, आता ही नहीं। रात को सोते समय शरीर की स्थूल इन्द्रियां तन्द्रा में रहती हैं, निद्रा में नहीं। मन तन्द्रा अवस्था में वैसे ही काम करता रहता है जैसे जागृत अवस्था में कार्यरत रहता है। इसी कारण स्वप्न में भिन्न-भिन्न प्रकार के दृश्य दिखाई देते रहते हैं।

मन को न तो जागने में चैन मिला न तन्द्रा में चैन मिला। प्रयास करना चाहिये कि शरीर से इतना काम लें कि रात को जी भरकर नींद आवे। सामान्य शारीरिक श्रम से शरीर को पर्याप्त नींद मिल जाती है। इसके अतिरिक्त सावधानी से काम करना चाहिये। कोई ऐसा काम न करें कि सोते में भी उसकी छाया मन पर रहे। स्वप्न का निरीक्षण करना चाहिये क्योंकि स्वप्नों से हम यह पता लगा सकते हैं कि हमारा जीवन प्रवाह किधर को है। जो स्वप्न आवें और जो जीवन को प्रभावित करते हैं उनको अपने गुरु को बतान चाहिये ओर जो परिवर्तन जीवन में लाने को वे बताये उसे करना चहिये। यदि स्वप्न में क्रोध आता है तो इसका आशय है कि आपमें अहंकार भरा पड़ा है। आप अपने आपको चुप नहीं रख सकते। और भयातुर हो, डरते हो तो अभी ईश्वर से बहुत दूर हो। जिसको ईश्वर का बल है उसे डर कैसा, उसे निर्भय रहना चाहिये। जैसे बच्चों के माता-पिता उनकी देखभाल करते हैं उसी प्रकार साधक जिस परमपिता की संतान है वही प्यारा बाप उनकी स्वयं देख-भाल करता है।

प्रार्थना में ईश्वर से कुछ मांगना या कहना हो तो वह सब अपनी दैनिक सरल भाषा में सरल मन से कहो। हृदय से जो विचार उत्पन्न हों उन्हीं को मानसिक शब्दों में मांगो।

सबेरे से लेकर रात तक ईश्वर की याद बनी रहनी चाहिये। बातों का प्रसंग चल रहा हो तो भी अन्तर प्रभु की याद में रमा हो। कानों से सुन रहे हैं, किन्तु याद ईश्वर की बनी है। तमाशा आदि देख रहे हैं तो अन्तर में सुमिरन सतत् चल रहा है। ऐसी आदत बना लेनी चाहिये। मजबूरी में कोई लड़ाई झगड़ा हो तो उसमें प्रभु की (गुरु को) याद कायम रखें। यदि आपको इष्ट के प्रति श्रद्धा है तो आप बुरी बात कर ही नहीं पायेंगे। स्तुति और हमारी करनी एक दूसरे से ताल मेल खाती रहे तब यह सही स्तुति है।

ॐ शान्ति शान्ति शान्ति! ●●●